कवित्त

(भाई गुरदास जी)

भगत-बछलु, सुनि होत हौं निरास हृदय,
पतित-पावन, सुनि आसा उरि धारि हौं।
अन्तरजामी सुनि कम्पत हौं, अन्तर्गति,
दीन के दयालु सुनि भै भरम टारि हौं॥
जलधर संगम कै अफल सेंबलु द्रुम,
चन्दन सुगन्धि सनबन्धि मलहार हौं।
अपनी करनी कर नरक हूं न पावौं ठौर
तुमरे विरद करि आसरो सम्हार हौं॥ ५०३॥

द्रौपति कुपीन-मात्र दई जो मुनीसर कौ,
तांते सभा मधि बह्यो बसन प्रवाह जी।
तन्दुल तनक जगदीस को सुदामे दए,
तांते पाये चतुर पदारथ अथाह जी।
दुखित गजिन्द्र अरविन्द गहि भेंट राखै
ताकै काजि चक्रपानि आनि ग्रसै ग्राह जी॥
कहा कोऊ करै कछु होत न काहू के किये,
जांकी प्रभु मानि लेइ सभै सुख तांहि जी॥४२५॥

पूछत पथक तिह मार्ग न धारे पग
प्रीतम के देसि कैसे बातन सै जाईऐ।
पूछत है बैद खात औखध न संजम सै

कैसे मिटै रोग सुखि सहजि समाईऐ ॥
पूछत सुहागनी कर्म है दुहागनी के
हृदय बिभचारू कत सिहजा बुलाईऐ ॥
गाइ सुनै आंखें मींचै पाइऐ न परम पदु
गुर-उपदेसु गहि जौ लौं न कमाईऐ ॥

(४) खांडु खांडु कहै जिह्वा न स्वाद मीठो आवै,
अग्नि अग्नि कहि सीत न बिनासु है ॥
बैदु बैदु कहि रोगु मिटत न काहू को है,
द्रव्बु द्रव्बु कहै कोऊ द्रव्यै न बिलास है ॥
चन्दनु चन्दनु कहै होत न सुबास बासु,
चन्दु चन्दु कहै उजियारो न प्रगास है ।
तैसे ज्ञान गोस्टि कहत न रहत पावै,
करनी प्रधान भानु उदित अकासि है ॥ ४३७ ॥

(५) दोइ दरपन देखे एक में अनेक रूप,
दोइ नाव पाव धरै पहुंचै न पारि है ।
दोइ दिसा गहै गहाए सैं हाथ पाऊं टूटै,
दोराहि दुचित होइ भूलि पग धारि है ।
दोइ भूप तांकै गाऊं परजा न सुखी होत,
दोइ पुरपन की न कुल-बधू नारि है ।
गुरसिखु होइ आन देव सेव टेव गहै,
सहै जमदंडु धृग जीवन संसारि है ॥ ४८७ ॥

(६) मानसर त्यागि आन सर जाइ बैठै हंसु,
खाइ जल-जन्तु हंस बंस को लजावई ।
सलिल बिछोहु भए जीवत जो रहै मीनु,
कपट स्नेह कै स्नेही न कहावई ।

बिनु घन बूंद जौ अनत जल पान करें,
चात्रिक सन्तान बिखै लांछनु लगावई !
चरन कमल अलि गुरसिखु मोख होइ,
आन देव सेवकु ह्वै मुकति न पावई ॥ ४६२ ॥

(७) जैसे बिनु लोचन बिलोकिये न रूप रंग.
श्रवण बिहून रागु नादु न सुनीजिऐ ।
जैसे बिनु जिह्वा न उचरे बचनु अरु
नासका बिहून बास बासना न लीजिऐ ॥
जैसे बिनु कर करि सकै न किरत कर्म,
चरन बिहून भौन-गौन कत कीजियै ।
असन बसन बिनु धीरजु न धरे देह
बिनु गुर-सब्द न प्रेम रसु पीजियै ॥ ५३२ ॥

(८) जोई कुला धर्म कर्म कै सुचार चार,
सोई परिवार बिखै स्रेस्ट बखानियै ।
बनज ब्योहार साचो शाह सनमुख जोई,
सोई तौ बनौटा निहकपट कै मानियै ।
स्वामी काम सावधान मानत नरेस आनि
सोई स्वामी कारजी प्रसिद्ध पहिचानियै ॥
गुर उपदेस परवेसु हृद अन्तरि है,
सबदि सुरति सोई सिखु जग जानियै ।

(९) तीरथ मजनु करबे को है गुनाउ इहु,
निरमल तनु तृषा तपति निवारिऐ ।
दरपन दीपु करि गहि को गुनाउ इहु,
पेखत चिहन मगु सुरति सम्भारिऐ ॥
भेटत भतार इहु नारि को गुनाउ, स्वांति,

बूंद सीप गति लै गरभु प्रतिपारिऐ ॥
तैसे गुर चरन सरन को गुनाउ इहु,
गुर उपदेस, करि हार उरि धारिऐ ॥ ३७७ ॥

(१०) जैसे हीरा हाथ मे सो तनकु दिखाई देत,
मोल, किए दामन ते भरत भण्डार जी ।
जैसे लर बांधे हुण्डी लागत न भार कछु,
आगै जाइ पाईअत लक्खमी अपार जी ॥
जैसे वट बीजु अति सूखम सरूप होत,
बोये मैं बिविध करे बिरखु बिथार जी ।
तैसे गुर बचन सचन गुरसिखन मै,
जानियै महात्मु गए ही हरिदुआर जी ॥ ३७८ ॥

(११) जैसे अहि अग्नि को बालक बिलोकि धावै,
गहि गहि राखै माता सुत बिललात है ।
तृषावन्त जन्तु जैसे चाहत अखाधि खादि,
जतन कै बैद जुगवत न सुहात है ॥
जैसे पन्थापन्थु नाहि बूझत बिबेक अन्ध,
करु गहे अटपटी चाल चलयो जात है ।
कामना करत तैसे कनिक औ कामिनी की,
राखे निरलेपु गुरु सिख अकुलात है ॥ ३६९ ॥

(१२) आवत है जांके भीख मांगन भिखारी दीन,
देखत अधीनता निरासो न बिडारि है ।
बैठत है जांके द्वार आसा को बिडारि स्वान,
अन्त करुणा कै तोरि टूक तांहि डारि है ।
पायन की पनही रहत परहरी परी,
ताहू काहू काजि उठि चलत सम्हार है ।

छाडि अहंकार छारु होइ गुरमारग मैं,
कबहूं दया कै आनि दयालु पगु धारि है ॥ ४३४ ॥

(१३) जैसे एक जननी के होत हैं अनेक सुत,
सभ ही में अधिक प्यारो सुत गोद को ।
सिआने सुत बनज विउहार के विचार बिखै,
गोद में अचेत हेत संपै न सहोद को ॥
पलना सुआइ माइ गृह काज लागै जाइ,
सुनि सुत रुदन पै पिआवै मन मोद को ।
आपा खोइ जोइ गुर चरन सरन गहै,
रहै निरदोखु मोख अनद बिनोद को ॥ ३६२ ॥

(१४) चींटी के उदर बिखै हस्ती समाइ कैसे
अतुल अपारु भारु भृंगी न उठावई ।
मच्छर कै डंग न मरत है बासुक नाग,
मक्करी न चीतं जीते सरि न पुजावई ॥
तमचरु उडत न पहुंचे अकास बास,
मूसा तो न पैरत समुद्र पार पावई ।
तैसे प्रिय प्रेम नेम अगम अगाध बोध,
गुरमुखि सागरि जिउ बूंद ह्वै समावई ॥ ७५ ॥

(१५ जल सै निकासि मीन राखिऐ पटम्बर मै,
बिनु जल तलफि तजत प्रिय प्राण है ।
बन सै पकरि पंछी पिंजरी में राखिऐ तौ
बिन बन मन उनमन उनमान है ।
भामनी भतार बिछुरत अति छीन दीन,
बिलख बदन ताहि भवन भयान है ।

तैसे गुरसिखु बिछुरत साध संगति सै,
जीवन जतनु बिनु संगति न आन है ।। ५१४ ।।

(१६) जैसे सुआ उड़त फिरत बन बन प्रति
जैसे ही बिरखि बैठे तैसो फल चाखई ।
परबसि होइ जैसी जैसीऐ संगत मिलै
गुनि उपदेस तैसी भाखा लै सुभाखई ।।
तैसे चितु चंचल चपल जल को सुभाउ,
जैसे रंग संगि मिले तैसो रंग राखई ।
अधम असाध जैसे बारुनि बिनास काल,
साध संगि गंग मिलि सुजन भिलाखई ।। १५५ ।।

(१७) जैसे तौ गोबंसु तृण खाइ दुहै गोरसु दै,
गोरस औटाइ दधि माखन प्रगास है ।
ऊख मै पयूख बन खंड खंड कै पिराए,
रस कै औटाए खंड मिसरी मिठास है ।
चन्दनु सुगन्धि सनबंध कै बनास्पति,
ढाक औ पलास जैसे चंदन सुवास है ।
साध संगि मिलत संसारी निरंकारी होत,
गुरमति पर-उपकार कै निवास है ।। १२९ ।।

(१८) नेहरि कुआरि कन्या लाडुली कै मानियत,
ब्याहे ससुरारि जाइ गुनन कै मानियै ।
बनज बिउहार लगि जात है बिदेस प्राणी,
कहीए सुपूतु लाभु लभत कै आनियै ।
जैसे तो संग्राम समै परदल में अकेलो,
जाइ जीति आवै सोइ सुभटु बखानियै ।

मानस जनम, पाइ चरन सरन गुर,
साधुसंगि मिले गुरद्वार पहिचानियै ॥ १८८ ॥

(१९) जैसे सर सरिता सकल में समुद्र बड़ो,
मेर मै सुमेरु बड़ो जगत बखानि है।
तरवर विखै जैसे चन्दन बिरख बड़ो,
धातु में कनिक अति उत्तम कै मानि है ॥
पंछन मै हंस मृगराजन मै सारदूल,
रागन में सिरीराग पारसु पखानि हैं।
गिआनन में गिआनु ध्यानन में ध्यानु गुर।
सकल धर्म में गृहस्त, परधानु है, ॥ ३७६ ॥

(२०) तुस मै तंदुल बोए निपजहिं सहस्र गुनो,
देह धारि करत हैं पर उपकार जी।
तुस में तंदुल निरबिघन न लागै घुन,
राखे रहहि चिरकालु होत न बिकारु जी ॥
तुस में निकसि होइ भग्न मलीन रूप
स्वाद करवाइ राधे रहहि न संसारि जी।
गुर उपदेस गुरसिख गृह मै बैरागी,
गृह तजि बन खंड होत न उधार जी ॥ १२१ ॥

(२१) होम जग नईवेद आदिक पूजा अनेक,
जप तप संजम अनेक पुन दान कै।
जल थल गिरि तर तीरथ भवन भूअ,
हिमाचल धारा अग्र अरपन प्रान कै।
राग नाद बाद संगीत वेद पाठ बहु,
सहज समाधि साधि कोटि जोग ध्यान कै।
चरन सरन गुर सिख साध संग परि,

बारि डारौं निग्रह हठ जतन कोटान कै ॥ २५५ ॥

(२२) सुरसरी सरसुती जमुना गोदावरी,
गया प्राग सेतु कुरखेतु मानसर हैं ।
कासी कांती द्वारावती माया मथुरा अजुध्या,
गोमती अवन्तिका किदार हिमधर हैं ।
नरवदा बिबिध बन देव स्थल कैलास,
नील मद्राचल सुमेर गिरिवर हैं ।
तीरथ अरथ सति धरम दया संतोख,
सिरि गुर चरन रज तुलि न सगर है ॥ ४१६ ॥

(२३) जैसे घरि लागै आगि जागि कूआ खोदयो चहै,
कारजु न सिद्ध होइ रोय पछुताईऐ ।
जैसे तौ सग्राम समै सीखियो चहै बीर विद्या,
अन्नथा उद्यम जैत पदवी न पाईऐ ।
जैसे निसि सोवत सगाति चलि जात पाछै,
भोर भये भार बांध चले कत जाईऐ ।
तैसे माया पंथ अन्ध अवधि विहाय जाय,
अंतकालि कैसे हरि नामि लिव लाईऐ ॥ ४९५ ॥

(२४) जैसे नाउ बूड़त से जोई बचे सोई भलो,
बूड़ि गये पाछै पछुतायो रहि जात है ।
जैसे घरि लागि आगि जोई बचे सोई भलो,
जरि बूझै पाछे कछु बस न बसात है ।
जैसे चोरु लागे जागे जोइ रहे सोई भलो,
सोइ गए रीतो घर देखे उठि प्रात है ।
तैसे अंतकालि गुर चरन सरन आवै,

पावै मोख-पदवी नतर बिललात है ॥६९॥

(२५) लज्जा कुल अंकुस औ गुरुजन सील डील,
कुलबधु व्रत कै पतिव्रता कहावई ।
दुस्ट सभा सँजोगि अधम असाध संगि,
बहु बिभचार धारि गनिका बुलावई ।
कुल बधु सुत को बखानियत गोत्राचार,
गनिका सुअनु पिता नाम को बतावई ।
दुरमति लागि जैसे कागु बन बन फिरै,
गुरमति हंसु एक टेक जसु पावई ॥१६४॥

(२६) तनक ही जामन कै दूधु दधि होत जैसे,
तनक ही कांजी परै दूधु फाटि जात है ।
तनक ही बीजु बोय बिरख बिथारु होइ,
तनक चिनग परे भसम समात है ।
तनक ही खाय बिखु होत है बिनास काल,
तनक ही अमृत कै अमरु ह्वै गात है ।
संगति असाध साध गनिका बिवाहिता ज्यूं,
तनक मैं उपकारु औ बिकार घात है ॥१७४॥

(२७) अपनु सुअनु जैसे लागत प्यारो जिय,
जानियै वैसेई प्यारो सकल ससांर कउ ।
आपनो दरबु जैसे राखिये जतन करि,
वैसेई समझि सभ काहूं के बिहार कउ ।
उसतति निंदा सुनि ब्यापत हरख सोगु,
वैसेई लगत जग अनिक प्रकार कऊ ।
तैसे कुल धरम करम जैसो जैसो जांको,

उत्तम कै मानि जानि ब्रह्म बिसथार कब ॥३६८॥

(२८) जैसे नैन बैन पंख सुन्दर सरबंग मोर,
ताके पग ओर देखि दोखु न बिचारियै ।
संदल सुगन्धि अति कोमल कमल जैसे,
कंटक बिलोकि न औगुन उर धारियै ।
जैसे है अमृत फलु मिस्ट गुनादि स्वादि,
बीज करवाई कै बुराई न सम्हारियै ।
तैसे गुर ज्ञान दानु सभहू सै मांगि लीजै,
बन्दना सकल भूत निंदा न तुकारियै ॥३६६॥

(२९) जैसे पतिब्रता पर पुरखै न देख्यो चहै,
पूरन पतिब्रता कै पति ही को ध्यानु है ।
सर सरिता समुंद्र चात्रिक न चाहै काहू,
आस घन बून्द प्रिय प्रिय गुन गान है ।
दिनकर ओर भोर चाहत नहीं चकोर,
मन बच क्रम हिमकरु प्रिय प्रान है।
तैसे गुरसिखु आन देव सेव रहित पै,
सहज सुभाय न अवग्या अभिमानु है ॥४६६॥

(३०) जैसे तौ सफल बन बिखै बिरखा बिबिध,
जांकौ फल मीठे खगु तां पै चलि जात है ।
जैसे परबत बिखै देखिये पाखान बहु,
जां मैं हीरा खोज ताहि खोजी ललचात है ।
जैसे तौ जलधि मधि बसत अनंत जंत,
मुक्ता अमोल जा मै हंसु खोजि खात है ।
तैसे गुर चरन सरन है असंख सिख,

जा मै गुर गिआनु तांहि कोक लपटात है ॥३६६॥

(३१) जैसे तौ मिठाई राखिये छिपाइ जतन कै,
चीटी चलि जाइ चीनि तांहि लपटात है।
दीपकु जगाइ जैसे राखिये दुराइ गृह,
प्रगट पतंगु तां मैं सहिज समात है।
जैसे तौ बिमल जलि कमलु एकांत बसै,
मधुकरु मधु अचवन तांहि जात है।
तैसे गुर सिख जिह घटि प्रगटत प्रेमु,
सकल संसारु तिह दुआरि बिललात है ॥४१०॥

(३२) मानसरी परि जो बैठाइयै लै जाइ बगु,
मुकता अमोल तजि मीन चीनि खात है।
असथन पान करवे कौ जौ लाइयै जोक,
पियत न पै लै लोहू अचये अघात है।
परम सुगन्धि पर राखी न रहत माखी,
महां दुरगन्ध पर वेगि चलि जात है।
जैसे गजु मज्जन कै डारत है छार सिरि,
संतन कै दोखी सन्त संगु न सुहात है ॥३३२॥

(३३) जैसे जल अन्तरि जुगन्तरि रहै पखानु,
भिदै न रिदै कठोरु बूडै वज्र भार कै।
अठ सठि तीरथ मज्जन करै तोंवरी तौ,
मिटत न करवाई धोय वार पार कै।
अहिनिसि अहि लपटानो रहै चन्दन कौ,
तजत न बिखु तऊ हौमैं अहंकार कै।
कपट स्नेह देह निहफल भे जगत मैं,

सन्तन को आहि दोखी दुबिधा बिकार कौ॥३२६॥

(३४) जैसे घर लागै आगि, भागि निकसत खान,
प्रीतम परोसी धाइ जरत बुझावई।
गोधनु हरत जैसे करत पुकार गोप,
गाउं मैं गुहार लागि तुरत छुड़ावई।
बूडत अथाहि जैसे प्रबल प्रवाह बिखै
पेखत पैरऊआ वारि पारि लै लगावई।
तैसे अंतकालि जमजालि कालु बिआलु ग्रसै,
गुरसिखु साधसंगि संकटु मिटावई॥१६७॥

(३५) जैसे बछुरा बिछुरि परै आन गाय थन,
दुग्धु न पानि करै मारत है लात की।
जैसे मानसरु त्यागि हंसु आन सरि जात,
खात न मुकत फल भुगति जु गात की।
जैसे राजदुआरि तजि आनदुआरि जात जनु,
होत मान-भंगु महिमा न काहू बात की।
तैसे गुरसिखु आन देव की सरन जात,
रहयो न परत राखि सकत न पातकी॥४४१॥

(३६) आंवन की साद कत मिटत आंमली खाइ,
पिता को प्यारु न परोसी पहि पाइयै।
सागर की नधि कत पाइयत पोखर सैं,
दिनकर सरि दीप जोति न पुजाइयै।
इन्द्र-बरखा समानि पुजसि न कूप-जलु,
चन्दन-सुबास न पलास महिकाइयैं।
स्री गुरदयाल सी दया न आन देव मैं,

जौ खन्ड ब्रह्मन्ड उदै असत लौ पाइयै ॥ ७२॥

(३७) दैत गुतु भगतु प्रगटु प्रहलादु भये,
देवसुत जग में सनीचरु वखानियै।
मधुपुर-बासी कंसु अधमु असुरु भये,
लंकाबासी सेवकु भवीखनु पछानियै।
सागर गंभीर बिखै बिखिआ प्रगास भई,
अहि मस्तकि मणि उदै उनमानीयै।
बरन स्थान लघु दीरघ जतन करै,
अकथ कथा विनोद बिसमु न जानियै ॥४०७॥

(३८) जैसे बिखु तनक ही खात मरि जात तातु,
गातु मुरझात प्रतिपाली बरखान की,
महिखी दुहाइ दूधु राखियै भांजनु भरि,
परत कांजी की बूंद बाद न रखान की।
जैसे कोटि भार तूलु रंचक चिनग परे,
होत भस्मात छिन मै अकरखान की।
तैसे परतन धन दूखन बिकार किये,
हरै निधि सुकृत सहज हरखान की ॥५०६॥

(३९) जैसे घाउ घायल को जतन कै नीको होत,
पीर मिटि जाय लीक मिटत न पेखियै।
जैसे फाटो अंबरो सिआइ पुनि ओढियत,
नांगो तौ न होइ तऊ थेगरी परेखियै।
जैसे टूटो बासनु संवारि देत है ठठेरो,
गिरत न पानी पै गठीलो भेखु भेखियै।
तैसे गुर चरन बिमुखु देखि पुनि सिखु,

सरन गहे पुनीत पै कलंक लेखियै ॥४१९॥

(४०) बाहर की अगनि बुझत जल सरिता कै.
नाउ मै जो आगि लगै कैसे कै बुझाईयै।
बाहर सैं भागि ओट लीजियत कोट गढ़,
गढ़ मैं जौ लूंट लीजै कहहु कत जाईयै।
चोरन कै त्रासि जाइ सरन गहे नरिंद,
मारे महिपति जीउ कैसे कै बचाईयै।
माया डरि डरपत हारि गुरद्वारै जावै,
तहां जौ माया व्यापै कहां ठहिराईयै ॥५४४॥

— वाणी —

श्री गुरु गोविन्द सिंह जी की

जाप साहिब में से

रुआल छन्द—

आदि रूप अनादि मूरति अजोन पुरख अपार।
सर्व मान त्रिमान देव अभेव आदि उदार॥
सर्व पालक सर्व घालक सर्व को पुनि काल।
जत्र तत्र बिराजहि अवधूत रूप रसाल॥ ॥७६॥

नाम ठाम न जात जाकर रूप रंग न रेख।
आदि पुरख उदार मूरति अजोन आदि असेख॥
देस और न भेस जाकर रूप रेख न राग।
जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलयो अनुराग ॥८०॥

नाम काम बिहीन पेखत धाम हूं नही जाहि ।
सर्ब मान सर्बत्र मान सदैव मानत ताहि ॥
एक मूरति अनेक दरसन कीन रूप अनेक ।
खेल खेल अखेल खेलन अंत को फिरि एक ॥८१॥

देव भेव न जानही जिह वेद और कतेब ।
रूप रंग न जात पात सु जानई किह जेब ॥
तात मात न जात जा करि जनम मरन बिहीन ।
चक्र बक्र फिरै चतुर चक मानही पुर तीन ॥८२॥

लोक चउदह के बिखै जगु जापही जिह जाप ।
आदि देव अनादि मूरति थापिओ सबै जिह थाप ॥
परम रूप पुनीत मूरति पुरनि पुरख अपार ।
सर्ब बिस्व रचयो सुयंभव गड़न भंजन हार ॥८३॥

काल हीन कला संजुगति अकाल पुरख अदेस ।
धर्म धाम सुभर्म रहत अभूत अलख अभेस ॥
अंग राग न रंग जाकहि जात पातन नाम ।
गर्ब गंजन दुस्ट भंजन मुकत दायक काम ॥८४॥

आप रूप अमीक अन उसतति एक पुरख अवधूत ।
गर्भ गंजन सर्ब भंजन आदि रूप असूत ॥
अंग हीन अभंग अनामत एक पुरख अपार ।
सर्ब लायक सर्ब घायक सर्ब को प्रतिपार ॥८५॥

सर्ब गंता सर्ब हंता सर्ब ते अनभेख ।
सर्ब सास्त्र न जानही जिह रूप रंग अरु रेख ॥
परम बेद पुरान जाकहि नेत भाखत नित ।
कोटि सिम्रति पुरान सास्त्र न आवई वहु चित ॥८६॥

मधुभार छन्द—

गुन गन उदार। महिमा अपार॥
आसन अभंग। उपमा अनग ॥८७॥
अनभव प्रकास। निस दिन अनास।
आजान बाहु। साहान साहु॥ ८८
राजान राज। भानान भान।
देवान देव। उपमा महान ॥८९॥
इद्रान इन्द्र। बालान बाल॥
रंकान रंक। कालान काल ॥९०॥
अनुभूत अंग। आभा अभग।
गति मिति अपार। गुन गन उदार॥ ९१
मुनि गन प्रनाम। निरभै निकाम।
अति दुति प्रचंड। मिति गति अखंड॥ ९२
आलिसय कर्म। आदृस्यय धर्म।
सरबा भरना ढय। अनडंड बाढय॥ ९३

मधुभार छन्द—

मुनि मनि प्रनाम। गुन गन मुदाम।
अरबर अगंज। हरि नर प्रभज॥ १६१
अन गन प्रनाम। मुन मन सलाम।
हरि नर अखंड। बर नर अमंड॥ १६२
अनभव अनास। मुनि मन प्रकास।
गुन गन प्रनाम। जल थल मुदाम॥
अनछिज अंग। आसन अभंग।
उपमा अपार। गति मिति उदार॥ १६४
जल थल अमंड। दिस विस अभंड।

अनभव अनास । घृत घर धुरास ।
आजान बाहु । एकै सदाहु ॥ १६६
ओअंकारि आदि । कथनी अनादि ।
खल खन्ड ख्याल । गुरवर अकाल ॥ १६७
घर घर प्रनाम । चित चरन नाम ।
अनछिज गात । आजिज न बात ॥ १६२ ॥
अनझंझ गात । अनरंज बात ।
अनटुट भंडार । अनठट अपार ॥ १६९
आडीठ धर्म । अति ढीठ कर्म ।
अन व्रन अनंत । दाता महंत ॥

हरि बोल मना छन्द—

करुणालय हैं । अरि घालय हैं ।
खल खंडन हैं । महि मंडन हैं ॥ १७१
जगतेस्वर हैं । परमेस्वर हैं ।
कलि कारन है । सर्ब उबारन हैं ॥ १७२
धृत के धरन हैं । जग के करन हैं ।
मन मानिय है । जग जानिय हैं ॥ १७३
सर्ब भर है । सर्ब कर है ।
सर्ब पासिय है । सर्ब नासिय है ॥ १७४
करुनाकर हैं । बिस्वम्भर हैं ॥
सर्वेस्वर है । जगतेस्वर है ॥ १७५
ब्रह्मांडस है । खल खंडस हैं ।
पर ते पर हैं । करुनाकर हैं ॥ १७६ ॥
अजपाजप हैं । अथपाथप है ।

अकृताकृति हैं। अमृतामृत हैं॥ १७७
अमृतामृत हैं। करुनाकृति हैं।
अकृताकृत हैं। धरणी धृत हैं॥ १७८
अमितेस्वर हैं। परमेस्वर हैं।
अकृताकृत हैं। अमृतामृत हैं॥ १७९
अजबाकृति हैं। अमृतामृत हैं।
नरनायक हैं। खल घायक हैं॥ १८०
बिस्वंभवर हैं। करुणालय हैं॥
नृप नायक हैं। सर्ब पायक हैं॥ १८१
भव भंजन हैं। अरि गंजन हैं।
रिपतापन हैं। जप जापन हैं। १८२
अकलंकृत हैं। सर्बाकृत हैं।
करता कर हैं। हरता हरि हैं॥१८३
परमातम हैं। सर्बआतम हैं।
आतम बस हैं। जस के जस हैं॥ १८४

"अकाल उसतत" में से

चौपाई—

प्रणवो आदि एकंकारा।
जल थल महीअलि कियो पसारा॥
आदि पुरख अबिगति अबिनासी।
लोक चतरदस जोति प्रकासी॥१
हस्त कीट के बीच समाना।
राव रंक जिह इकसर जाना॥
अद्वै अलख पुरख अबिगामी।

सब घट घट के अंतरजामी ॥२
अलख रूप अछै अनभेखा ।
राग रंग जिह रूप न रेखा ॥
बरन चिहन सभहूं ते न्यारा ।
आदि पुरख अद्वै अविकारा ॥ ३
बरन चिहन जिह जात न पाता ।
सत्र मित्र जिह तात न माता ॥
सभ ते दूरि सभन ते नेरा ।
जल थल महीअलि जाहि बसेरा ॥४
अनहद रूप अनाहद बानी ।
चरन सरन जिह बसत भवानी ॥
ब्रह्मा बिसन अंत नहीं पायो ।
नेत नेत मुखचार बतायो ॥५
कोट इंद्र उपइंद्र बनाए ॥
ब्रह्मा रुद्र उपाइ खपाए ॥
लोक चतरदस खेल रचायो ।
बहुर आप ही बीच मिलायो ॥६
दानव देव फनिंद अपारा ।
गंध्रब जच्छ रचे सुभचारा ॥
भूत भविख भवान कहानी ।
घट घट के पट पट की जानी ॥७
तात मात जिह जात न पाता ।
एक रंग काहू नहीं राता ॥
सर्ब जोत के बीच समाना ।
सबहूं सर्ब ठौर पहिचाना ॥८

काल रहित अनकाल सरूपा ।
अलख पुरख अविगत अवधूता ।
जात प त जिह चिहृन न बरना ।
अवगत देव अछै अन भरमा ॥९
सभ को काल सभन को कर्ता ·
रोग सोग दोखन को हरता ॥
एक चित्त जिह इक छिन ध्यायो ।
काल फास के वीच न आयो ।१०

कबित —

कतहूं सुचेत हुइ कै चेतना को चार कियो,
कतहूँ अचित हुइके सोवत अचेत हो ।
कतहूँ भिखारी हुइ कै मांगत फिरत भीख,
कहूँ महादान हुइ कै मांगयो धन देत हो ।
कहूँ महाराजन को दीजत अनंत दान,
कहूँ महाराजन से छीन छित लेत हो ।
कहूं बेदरीत कहूं तासिउ बिपरीत
कहूं त्रिगुन अतीत कहूं सुरगुन समेत हो ॥१॥
कहूं सस्त्रधारी कहूं विद्या के बिचारी,
कहू मारुत अहारी कहूं नार के निकेत हो ।
कहू देव वाणी कहूं सारदा भवानी,
कहू मंगला मिड़ानी कहूं स्याम कहूं सेत हो ।
कहूं धर्म धामी कहूं सर्ब ठौर गामी,
कहूं जती कहू कामी कहूं देत कहूं लेत हो ।
कहू बेदरीत कहूं तासिउ बिपरीत,
कहू त्रिगुन अतीत कहूं सुरगुन समेत हो ॥४॥

कहूं गीत नाद के निदान कौ बतावत हो,
कहूं नृतकारी चित्रकारी के निधान हो।
कतहू प्यूख होइ कै पीवत पिवावत हो,
कतहूं म्यूख ऊख कहू मदपान हो॥
कहूं महासूर हुइ कै मारत मवासन कौ,
कहूं महादेव देवतान के समान हो।
कहूं महादीन कहूं द्रव के अधीन,
कहूं विद्या में प्रवीन कहूं भूम कहूं भान हो॥८॥
निरजुर निरूप हो कि सुंदर सरूप हो,
कि भूपन के भूप हो कि दाता महादान हो।
प्रान के बचय्या दूध पूत के दिवय्या,
रोग सोग के मिटय्या किधौ मानी महामान हो॥
विद्या के विचार हो कि अद्वै अबिकार हो,
कि सिद्धता की मूरति हो कि सुद्धता की शान हो।
जोबन के जाल हो कि काल हूं के काल हो,
कि सत्रन के सूल हो कि मित्रन के प्रान हो॥९॥
कहूं ब्रह्मवाद कहूं बिद्या को बिखाद,
कहूं नाद को ननाद कहूं पूरन भगत हो।
कहूं वेद रीत कहूं बिद्या की प्रतीत,
कहूं नीत औ अनीत कहूं ज्वाल सी जगत हो॥
पूरन प्रताप कहूं इकांती को जाप कहूं,
ताप को अताप कहूं जोग ते डिगत हो।
कहूं बरदेत कहूं छल सिउ छिनाइ लेत,
सर्व काल सर्व ठौर एक से लगत हो॥१०॥

सवय्ये—

स्रावग सुद्ध समूह सिधान के देखि फिरयो घर जोग जती के।
सूर सुरार्दन सुद्ध सुधाधिक, संत समूह अनेक मती के॥
सारे ही देस को देखि रह्यो मत, कोऊ न देखियत प्रान पती के।
स्री भगवान की भाय कृपा हूं ते एक रती बिनु एक रती के॥१॥

माते मतंग जरे जर संग अनूप उतंग सुरंग सवारे।
कोट तुरंग कुरंग से कूदत पउन के गउन कउ जात निवारे।
भारी भुजान के भूप भली बिधि,निआवत सीस न जात बिचारे।
एते भये तो कहा भये भूपत, अन्त को नांगे ही पाइ पधारे॥२॥

जीति फिरै सभ देस दिसान को बाजत ढोल मृदंग नगारे।
गुंजत गूढ़ गजान के सुंदर हंसत ही हय राज हज़ारे॥
भूत भविक्ख भवान के भूपत, कउन गनै नही जात बिचारे।
स्रीपति स्रीभगवान भजे बिनु.अन्त कउ अन्त के धाम सिधारे।३।

तीरथ न्हान दया दम दान, सुसंजम नेम अनेक बिसेखै।
बेद पुरान कतेब कुरान, जमीन ज़मान सबान के पेखै॥
पउन अहार जती जत धार सबै सु बिचार हजारक देखै।
स्री भगवान भजे बिनु भूपति, एक रती बिनु एक न लेखै॥४॥

सुद्ध सिपाह दुरंत दुबाह, सुसाजि सनाह दुर्जान दलैंगे।
भारी गुमान भरे मन मैं, कर परबत पंख हले न हलैंगे॥
तोर अरीन मरोर मवासन, माते मतंगन मान मलैंगे।
स्री पत स्री भगवान, कृपा बिनु, त्याग जहानु निदान चलैंगे॥५॥

बीर अपार बडे बरिआर, अबिचारहि सार की धार भछय्या।
तोरत देस मलिंद मवासन, माते गजान के मान मलय्या।

गाड़े गड़ान के तोड़नहार सु बातन ही चक चार लवय्या।
साहिब स्री सभ को सिरि नायक,जाचिक अनेक सुएकदिवय्या॥६

दानव देव फनिंद निसाचर, भूत भविक्ख भवान जपैंगे।
जीव जिते जल मै थल मै पलही पल मै सब थाप थपैंगे॥
पुन्न प्रतापन बाढ़ जैत धुन पापन के बहु पुंज खपैंगे।
साध समूह प्रसन्न फिरैं जग, सत्र सभै अवलोक चपैंगे॥७

मानव इंद्र गजिंद्र-नराधप जौन त्रिलोक को राज करैंगे।
कोटि इसनान गजादिक दान अनेक सुअंबर साज बरैंगे।
ब्रह्म महेसर विशन सचीपत अंत फसे जम फास परैंगे।
जे नर स्रीपत के परस है पग ते नर फेर न देह धरैंगे॥८॥

कहा भयो जो दोऊ लोचन मूंदकै बैठि रहिओ बक ध्यान लगायो।
नात फिरयो लिये सात समुद्रन लोक गयो परलोक गवायो॥
बासु कियो बिखिआन सो बैठ के ऐसे ही ऐस सुबैस बितायो॥
साचु कहौ सुन लेहु सबै, जिन प्रेम कियो तिन ही प्रभु पायो॥९॥

काहूलै पाहन पूज धरो सिर काहू लै लिंगु गरे लटकायो।
काहू लखिओ हरि अवाची दिसा महि काहू पछाहको सीस निवायो।
कोऊ बुतान को पूजत है पसु, कोऊ मृतान कहु पूजन धायो।
कूर क्रिया उरझिओ सभ ही जग,स्री भगवान को भेद न पायो॥१०॥

तोमर छन्द —

कई अगनि होत्र करंत।
कई उर्ध ताप दुरंत॥
कई उर्ध बाह संन्यास।
कहूँ जोग भेस उदास॥ ११॥

कहूं निवली कर्म करंत ।

कहूँ पउन अहार दुरंत ॥

कहूं तीरथ दान अपार ।

कहूँ जग्ग कर्म उदार । १३

कहूँ अगन होत्र अनूप ।

कहूं न्यायराज बिभूत ॥

कहूं सास्त्र स्मृति रीत ।

कहूँ बेद सिउ बिपरीत ॥ १४

कहूं देस देस फिरंत ।

कहूं एक ठौर इसथंत ॥

कहूं करत जल महि जाप ।

कहूँ सहत तन पर ताप ॥ १५

कहूँ बास बनहि करंत ।

कहूँ ताप तनहि सहंत ॥

कहूं गृहस्थ धर्म अपार ।

कहूं राजरीत उधार । १६

कहूँ रोग रहत अभरम ।

कहूं कर्म करत अकरम ॥

कहूँ सेख ब्रम सरूप ।

कहूं नीत राज अनूप ॥ १७ ॥

कहूं रोग सोग बिहीन ।

कहूं एक भगत अधीन ॥

कहूं रंक राज कुमार ।

कहूं बेद ब्यास अवतार ॥ १८ ॥

कहूं ब्रम बेद रटंत ।

कई सेख नाम उचरंत ॥
वैराग कहूं संन्यास ।
कहू फिरत रूप उदास ॥ १६ ॥
सभ कर्म फोकट जान ।
सब धर्म निहफल मान ॥
बिन एक नाम अधार ।
सब कर्म धर्म बिचार ॥ २० ॥

कवित्त—

खूक मलाहारी गज गदहा विभूति धारी गिदूआ मसान बास करिओई करत है। घू-घू मट वासी लगे डोलत उदासी, मृग तरवर सदीव मोन साधेई मरत है। बिंद के सघय्या ताहू हीज की बडय्या देत बन्दरा सदीव पाइ नागे ही फिरत है॥ अंगना अधीन काम क्रोध मै प्रवीन एक ग्यान के विहीन छीन कैसेई तरत है॥ १ ॥

जोगी जती ब्रह्मचारी बड़े बड़े छत्रधारी, छत्र ही की छाया कई कास लौ चलतु है। बड़े वड़े राजन के दाबत फिरत देस, बड़े बड़े राजन के दर्प को दलतु है॥ मान से महीप और दलीप जैसे छत्रधारी वड़ो अभिमान भुज दण्ड को करत है॥ दारा से दलीसर द्रजोधन से मानधारी, भोगि-भोगि भूमि, अंति भूमि मै मिलतु है॥८॥

सिजदे करे अनेक तोपची कपट भेस पोस्ती अनेकदा निवावत है सीस कौ। कहा भयो मल्ल जौ पै काढत अनेक डंड सो तौ न डंडौत असटांग अथतीस कौ॥ कहा भयो रोगी जौ पै डारयौ रहयो उर्ध मुख मन तै न मूंड निहुराइ आदि ईस

कौ ॥ कामना अधीन सदा दामना प्रवीन एक भावना विहीन कैसे पावै जगदीस कौ ॥६॥

पंचबार गीदर पुकारे परै सीतकाल कुंचर औ गदहा अनेकदा पुकारही । कहा भयो जो पै कलवत्र लियो कांसी बीच चीर चीर चोरटा कुठारन सो मारही ॥ कहा भयो फांसी डार बूडयो जड़ गंगाधार, डार डार फास ठग मार मार डार ही । डूबे नरक धार मूढ़ ग्यान के बिना बिचार, भावना बिहीन कैसे ग्यान को बिचारही ॥१३॥

कोऊ भयो मुंडिया सन्यासी कोऊ जोगी भयो, कोऊ ब्रह्मचारी कोऊ जती अनमानवो । हिन्दू औ तुर्क कोऊ राफजी इमाम साफी मानस की जात सबै एकै पहचानबो ॥ करता करीम सोई राजक रहीम ओई दूसरो न भेद कोई भूल भ्रम मानबो । एक ही की सेव सभ ही को गुरदेव एक, एक ही सरूप सबै एकै जोत जानबो ॥१५॥

देहुरा मसीत सोई पूजा औ निमाज ओई मानस सबै एकु पै अनेक को भ्रमाउ है । देवता अदेव जच्छ गंधरब तुरक हिन्दू न्यारे-न्यारे देसन के भेस को प्रभाउ है । एकै नैन एकै कान एकै देह एकै बान, खाक बाद आतश औ आब को रलाउ है ॥ अल्लाह अभेख सोई पुरान औ कुरान ओई, एक ही सरूप सबै एक ही बनाउ है ॥१६॥

जैसे एक आग ते कनूका कोट आग उठे, न्यारे न्यारे होइकै फेर आग मैं मिलाहिगे जैसे एक धूर ते अनेक धूर पूरत है, धूर के कनूका फेर धूर ही समाहिगे । जैसे एक नद ते तरंग कोट उपजत है, पान के तरंग सबै पान ही कहाहिगे । तैसे

विस्व रूप ते अभूत भूत प्रगट होइ, ताही ते उपज सबै ताही मै समाहिगे ॥१७॥

पाधड़ी छन्द —

तन सीत घाम बर्खा सहंत ।
कई कल्प एक आसन बितंत ॥
कई जतन जोग विद्या बिचार ।
साधंत तदप पावत न पार ॥९॥
कई उर्ध बाह देसन भ्रमंत ।
कई उर्ध मद्ध पावक झुलंत ॥
कई स्मृति सास्त्र उचरंत वेद ।
कई कोक काव करथत कतेब ॥१०॥
कई अगन होत्र कई पउन अहार ।
कई करत कोटि मृति को अहार ॥
कई करत साक पै पत्र तच्छ ।
नही तदप देव होवत प्रतच्छ ॥११॥
कई गीत गान गंधरब रीत ।
कई वेद सास्त्र विद्या प्रतीत ॥
कहूँ वेद रीत जग्यादि कर्म ।
कहूँ अगन होत्र कहूं तीरथ धर्म ॥१२॥
कई देस देस भाखा रटंत ।
कई देस देस विद्या पढ़ंत ॥
कई करत भांत भांतन बिचार ।
नही नैक तास पायत न पार ॥१३॥
बिन भगत सकत नही परत पान ।

बहु करत होम अर जग्ग दान ॥
बिन एक नाम इक चित्त लीन ।
फोकटो सर्ब धर्मा बिहीन ॥२०॥

तोटक छन्द—

जिह खंड अखंड प्रचन्ड किये,
जिह छत्र उपाइ छिपाइ दिये ।
जिह लोक चतरदस चार रचे,
नर गंधरब देव अदेव सचे ॥१३॥
जिह बेद पुरान कतेब जपै,
स्रुत सिंध अधोमुख ताप तपै ।
कई कलपन लौ तप ताप करै,
नहीं नैक कृपानिध पान परै ॥१८॥
जिह फोकट धर्म सबै तजिकै,
इक चित्त कृपानिध को भज है ।
तेऊ या भवसागर को तर है,
भव भूल न देह पुनर धर है ॥१९॥
इक नाम बिना नहीं कोट ब्रती,
इम बेद उचारत सारसुती ।
जोऊ वा रस के चसके रस है,
तेऊ भूल न काल फधा फस है ॥२०॥

नराज छन्द —
अगाध आदि देव की अनाद बात मानियै ।
न जात पात मंत्र मित्र सत्र स्नेह जानियै ॥
सदीव सर्ब लोक के कृपाल ख्याल मै रहै ।

तुरंत द्रोह देह के अनंत भांत सो दहै ॥२०॥

रूआल छंद—

जात जन्म न काल कर्म न धर्म कर्म विहीन।
तीरथ जात न देव पूजा गोर के न अधीन॥
सर्ब सप्त पतार के तर जानियै जिह जोत।
सेस नाम सहंस फन नहि नेत पूरन होत ॥६।१८६
रूप रेख न रंग जाको राग रूप न रंग।
सर्ब लायक सर्ब घायक सर्ब ते अनभंग॥
सर्ब दाता सर्ब ज्ञाता सर्ब को प्रतिपाल।
दीन बंध दयाल स्वामी आदि देव अपाल ॥१९०
दुस्ट हरना सृस्ट करना दयाल लाल गोविन्द।
मित्र पालक सत्र घालक दीन दयाल मुकन्द॥
अघौ डंडरा दुस्ट खंडरा काल हूं के काल।
दुस्ट हरनं पुस्ट करनं सर्ब के प्रतिपाल॥ १९४

कबित —

देव देवतान को सुरेस दानवान को,
महेस गंग धान को अभेख कहियतु है।
रंग मै रंगीन राग रूप मै प्रवीन और,
काहू पै न दीन साध अधीन कहियतु है।
पाईयै न पार तेज पुंज मै अपार,
सर्ब विद्या के उदार हैं अपार कहियतु हैं।
हाथी की चिंवार पल पाछै पहुंचत ताहि,
चीटी की पुकार पहिले ही सुनियतु है॥ २५६॥
अंजन बिहीन हैं निरंजन प्रबीन हैं कि,

सेवक अधीन हैं कटय्या जम जाल के ।
देवन के देव महांदेव हूं के देव नाथ,
भूम के भुजय्या हैं मुहय्या महा बाल के ।
राजन के राजा महा साज हूं के साजा
महाजोग हूँ को जोग हैं धरय्या द्रुम छाल के।
कामना को करु हैं कि बुधता के घरु हैं कि,
सिद्धताके साथी हैं कि काल हैं कुत्र लके ॥२६३॥

बचित्र नाटक मे से

त्रिभंगी छन्द —

खग खण्ड बिहंडं खल दल खंडं अति रन मंडं बरबंडं ।
भुज दंड अखंडं तेज प्रचंडं जोत अमंडं भान प्रभं ॥
सुख संता करनं दुरमति दरणं किलबिख हरणं असि सरणं ।
जै जै जगकारण सृस्ट उबारण मम प्रति पारण जै तेगं ॥२॥

भुयंग प्रयात छन्द —

रचे रैण दिवसं, थपे सूर इंद्रं ।
. नठे दईव दानो रचे बीर बृंदं ॥
करी लोह कल्मं लिखिश्रो लेख माथं ।
सबै जेर कीने बली काल हाथं ॥ २५

नराज छन्द —

कृपान पान धारियं । करोर पाप टारियं ॥
गदा गृस्ट पाणियं । कमाण बाण ताणियं ॥ ४७
सब्द संख बाजियं । धम्मिक घुंघर गाजियं ।
सरनि नाथ तोरियं । उबार लाज मोरियं ॥ ४८

सवैय्या —
मेर करो तृण ते मुहि जाहि गरीबनिवाज न दूसर तो सो।
भूल छिमो हमरी प्रभ आपन भूलनहार कहू कोऊ मोसो॥
सेव करी तुमरी तिनके सभ ही गृह देखियत द्रव भरोसो।
या कल मै सभ काल कृपान के भारी भुजान को भारी भरोसो॥९२
कागद दीप सभै करिकै अरु सात समुंद्रन की मसु कै हो।
काट बनासपति सगरी लिखवेहू के लेखन काज बनै हो।
सारसुती बकता करि के जुग कोटि गणेश कै हाथ लिखै हो।
काल कृपान बिना बिनती न तऊ तुमको प्रभु नैक रिझै हो॥१०

बाणी गुरु तेग बहादुर जी की

राग गउड़ी

(१)

साधो मन का मानु त्यागउ।
काम क्रोधु संगति दुरजन की ताते अहि निसि भागउ॥१॥रहाउ।
सुखु दुखु दोनो सम करि जानै, अउरु मानु अपमाना।
हरख सोग ते रहै अतीता. तिनि जगि ततु पछाना॥१॥
उसतति निंदा दोऊ तिआगै, खोजै पदु निरबाना।
जन नानक इहु खेलु कठनु है, किनहू गुरमुखि जाना॥२॥

(२)

साधो रचना राम बनाई।
इकि बिनसै इक असथिरु मानै, अचरजु लखिओ न जाई॥१॥रहाउ
कामु क्रोधु मोह बसि प्रानी, हरि मूरति बिसराई।

झूठा तनु साचा करि मानिओ जिउ सुपना रैनाई ॥
जो दीसै सो सगल बिनासै जिउ बादर की छाई ।
जन नानक जगु जानिओ मिथिया रहिओ राम सरनाई ॥२॥

(३)

प्रानी कउ हरि जसु मनि नहीं आवै ।
अहि निसि मगनु रहै माया मै कहु कैसे गुन गावै ॥१॥ रहाउ ।
पूत मीत माइआ ममता सिउ इह बिधि आपु बंधावै ।
मृग तृसना जिउ झूठो इहु जग देखि तासि उठि धावै ॥१॥
भुगति मुकति का कारनु सुआमी मूढ ताहि बिसरावै ।
जन नानक कोटन मै कोऊ भजनु राम को पावै ॥२॥

(४)

साधो इहु मनु गहिओ न जाई ।
चंचल तृसना संगि बसतु है याते थिरु न रहाई ॥१॥ रहाउ ।
कठन करोध घट ही के भीतरि जिह सुधि सभ बिसराई ।
रतनु गिआनु सभको हिरि लीना तासिउ कछु न बसाई ॥१॥
जोगी जतन करत सभ हारे गुनी रहे गुन गाई ।
जन नानक हरि भए दयाला तउ सभ बिधि बनि आई ॥२॥

(५)

साधो गोबिंद के गुन गावउ ।
मानस जनम अमोलकु पाइओ बिरथा काहि गवावउ ॥१॥ रहाउ ।
पतित पुनीत दीन बंध हरि सरनि ताहि तुम आवउ ।
गज को त्रासु मिटिओ जिह सिमरत तुम काहे बिसरावउ ॥१॥
तजि अभिमानु मोह माइआ फुनि भजन राम चितु लावउ ।
नानक कहत मुकति पंथ इहु गुरमुखि होइ तुम पावउ ॥२॥

(६)

कोऊ माई भूलिओ मनु समझावै ।
बेद पुरान साध मग सुनि करि निमख न हरि गुन गावै ॥१॥रहाउ॥
दुरलभ देह पाइ मानस की बिरथा जनमु सिरावै ।
माइआ मोह महा संकट बन तासिउ रुच उपजावै ॥१॥
अंतरि बाहरि सदा संगि प्रभु ता सिउ नेहु न लावै ।
नानक मुकति ताहि तुम मानहु जिह घटि रामु समावै ॥२॥

(७)

साधो राम सरनि बिसरामा ।
बेद पुरान पढे को इह गुन सिमरै हरि को नामा ॥१॥ रहाउ ॥
लोभ मोह माइआ ममता फुनि अउ बिखिअन की सेवा ।
हरख सोग परसै जिह नाहनि सो मूरति है देवा ॥१॥
सुरग नरक अमृत बिखु ए सभ तिउ कंचनु अरु पैसा ।
उसतति निंदा ए सम जाकै लोभु मोहु फुनि तैसा ॥२॥
दुखु सुखु ए बाधे जिह नाहनि तिह तुम जानहु गिआनी ।
नानक मुकति ताहि तुम मानहु इह बिधि को जो प्रानी ॥३॥

(८)

मन रे कहा भइओ तै बउरा ।
अहि निसि अउध घटै नहीं जानै भइओ लोभ संगि हउरा ॥रहाउ॥
जो तनु तै अपुनो करि मानिओ अरु सुंदर गृह नारी ।
इन मै कछु तेरो रे नाहनि देखो सोच बिचारी ॥१॥
रतन जनमु अपुनो तै हारिओ गोबिन्द गति नहीं जानी ।
निमख न लीने भइओ चरनन सिउ बिरथा अउध सिरानी ॥२॥
कहु नानक सोई नरु सुखीआ राम नाम गुन गावै ।

अउर सगल जगु माइआ मोहिआ निरभै पदु नहीं पावै ॥३।

(६)

नर अचेत पाप ते डरु रे।
दीन दइआल सगल भै भंजन सरनि ताहि तुम परु रे। रहाउ।
वेद पुरान जास गुन गावत ताको नामु हीऐ मो धरु रे ॥
पावन नामु जगत मै हरि को सिमरि सिमरि कसमल सभ हरु रे।१।
मानस देह बहुरि नह पावै कछू उपाउ मुकति का करु रे ॥
नानक कहत गाइ करुनामै भवसागर कै पारि उतरु रे ॥२।

॥ रागु आसा ॥

(१)

बिरथा कहउ कउन सिउ मन की।
लोभ ग्रसिओ दसहू दिसि धावत आसा लागिओ धन की॥१।रहाउ।
सुख कै हेत बहुतु दुखु पावत सेव करत जन जन की।
दुआरहि दुआरि सुआन जिउ डोलत नह सुध राम भजन की।१।
मानस जनमु अकारथ खोवत लाज न लोक हसन की
नानक हरि जसु किउ नहीं गावत कुमति बिनासै तन की।२।

॥ राग देव गंधारी ॥

(१)

यह मनु नैक न कहिओ करै।
सीख सिखाइ रहिओ अपनी सी दुरमति ते न टरै ॥१ रहाउ।
मद माइआ कै भइओ बावरो हरि जसु नहि उचरै ॥
करि परपंचु जगत कउ डहकै अपुनो उदरु भरै ॥१।
सुआन पूछ जिउ होइ न सूधो कहिओ न कान धरै ॥

कहु नानक भजु राम नाम नित जा ते काजु सरै ॥ २ ।

(२)

सभ किछु जीवत को बिवहार ।
मात पिता भाई सुत बंधप अरु फुनि गृह की नारि ॥१ रहाउ।
तन ते प्रान होत जब निआरे टेरत प्रेत पुकारि ।
आध घरी कोऊ नहि राखै घर ते देत निकारि ॥१।
मृग तृस्ना जिउ जग रचना यह देखहु रिदै बिचारि ।
कहु नानक भजु राम नामु नित जा ते होत उधार ।।२।

(३)

जगत मै जूठी देखी प्रीति ।
अपने ही सुख सिउ सभ लागे किआ दारा किआ मीत ॥१ रहाउ।
मेरउ मेरउ सभै कहत है हित सिउ बाधिउ चीत ।
अंति कालि संगी नह कोऊ इह अचरज है रीति ॥१।
मन मूरख अजहू नह समझत सिख दै हारिओ नीत ।
नानक भउजलु पारि परै जउ गावै प्रभ के गीत ॥२।

॥ राग बिहागड़ा ॥

(१)

हरि की गति नहि कोऊ जानै ।
जोगी जती तपी पचि हारे, अरु बहु लोग सिआने ॥१ रहाउ।
छिन महि राउ रंक कउ करई राउ रंक करि डारे ।
रीते भरे भरे सखनावै यह ता को बिवहारे ।१।
अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखनहारा ।
नाना रूपु धरे बहुरंगी सभ ते रहै निआरा ॥२।
अगनत अपारु अलख निरंजन जिह सभ जगु भरमाइओ ।

सगल भरम तजि नानक प्रानी चरनि ताहि चितु लाइओ॥३॥

॥ राग सोरठि ॥

(१)

रे मन राम सिउ करि प्रीति।
स्रवन गोबिंद गुनु सुनउ अरु गाउ रसना गीति ॥रहाउ।
करि साध संगति सिमरु माधो होहि पतित पुनीत।
काल बिआलु जिउ परिओ डोलै मुखु पसारे मीत ॥१।
आजु कालि फुनि तोहि ग्रसि है समझि राखउ चीति।
कहै नानकु रामु भजि लै जातु अउसरु बीत ॥२।

(२)

मन की मन ही माहि रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे चोटी कालि गही ॥ रहाउ।
दारा मीत पूत रथ संपति धन पूरन सभ मही।
अवर सगल मिथिआ ए जानउ भजनु राम को सही ॥ १।
फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही।
नानक कहत मिलन की बरीआ सिमरत कहा नहीं। ।२।

(३)

मन रे कउनु कुमति तै लीनी।
परदारा निंदिआ रस रचिओ राम भगति नहीं कीनी॥१ रहाउ
मुकति पंथु जानिओ तै नाहनि धनु जोरन कउ धाइआ।
अंति संगि काहू नहीं दीना बिरथा आपु बंधाइआ ॥१।
ना हरि भजिओ न गुरजनु सेविओ नह उपजिओ कछु गिआन॥
घट ही माहि निरंजनु तेरै तै खोजत उदिआना ।।२।

बहुतु जनम भरमत तै हारिओ असथिर मति नही पाई ॥
मानस देह पाइ पद हरि भजु नानक बात बताई ॥३॥

(४)

मन रे प्रभ की सरनि बिचारो ।
जिह सिमरत गनका सी उधरी ता को जसु उर धारो ।रहाउ।
अटल भइओ ध्रूअ जा कै सिमरनि अरु निरभै पदु पाइआ ।
दुखहरता इह बिधि को सुआमी तै काहे बिसराइआ ॥१।
जब ही सरनि गही किरपानिधि गज गराह ते छूटा ॥
महमा नाम कहा लउ बरनउ राम कहत बंधन तिह तूटा ।२।
अजामलु पापी जगु जाने निमख माहि निसतारा ।
नानक कहत चेत चिंतामनि तै भी उतरहि पारा ॥३।

(५)

प्रानी कउनु उपाउ करै ।
जा ते भगति राम की पावै जम को त्रासु हरै ॥ रहाउ।
कउनु करम बिदिआ कहु कैसी धरमु कउनु फुनि करई ।
कउनु नामु गुर जा कै सिमरै भवसागर कउ तरई ॥१।
कल मै एकु नामु किरपानिधि जाहि जपै गति पावै ।
अउर धरम ता कै समि नाहनि इह बिधि बेदु बतावै ॥२।
सुखु दुखु रहत सदा निरलेपी जा कउ कहत गुसाई ।
सो तुम ही महि बसै निरंतरि नानक दरपन निआई ॥३।

(६)

माई मै किहि बिधि लखउ गुसाई ।
महा मोह अगिआनि तिमरि मो मनु रहिओ उरझाई ॥रहाउ।
सगल जनम भ्रम ही भ्रम खोइओ नह असथिरु मति पाई ।
बिखिआसकत रहिओ निस बासुर नह छूटी अधमाई ॥१।

साध संगु कबहू नही कीना नह कीरति प्रभ गाई ॥
जन नानक मै नाहि कोऊ गुनु राखि लेहु सरनाई ॥२।

(७)

माई मनु मेरो बसि नाहि।
निसबासुर बिखिअन कउ धावत किह बिधि रोकउ ताहि ॥१॥रहाउ।
बेद पुरान सिमृति के मति सुनि निमख न हीए बसावै ।
परधन पर दारा सिउ रचिओ बिरथा जनमु सिरावै ॥१।
मदि माइआ कै भइओ बावरो सूझत नह कछु गिआना।
घट ही भीतरि बसत निरंजनु ता को मरमु न जाना ।२।
जब ही सरनि साध की आइओ दुरमति सगल बिनासी ।
तब नानक चेतिओ चिंतामनि काटी जम की फासी ॥३।

(८)

रे नर इह साची जीअ धारि ।
सगल जगतु है जैसे सुपना बिनसत लगत न बार॥१॥रहाउ।
बारू भीति बनाई रचि पचि रहत नही दिन चारि ।
तैसे ही इह सुख माइआ के उरझिओ कहा गवार ॥१।
अजहू समझि कछु बिगरिओ नाहिनि भजि ले नामु मुरारि ।
कहु नानक निज मतु साधन कउ भाखिओ तोहि पुकारि ॥२।

(९)

इह जगि मीतु न देखिओ कोई ।
सगल जगतु अपनै सुखि लागिओ दुख मै संगि न होई ॥१॥रहाउ।
दारा मीत पूत सनबंधी सगरे धन सिउ लागे ।
जब ही निरधन देखिओ नर कउ संगु छाडि सभ भागे ॥१।
कहउ कहा यिआ मन बउरे कउ इन सिउ नेहु लगाइओ ।
दीनानाथ सकल भै भंजन जसु ता को बिसराइओ । २।

सुआन पूछ जिउ भइओ न सूधउ बहुतु जतनु मै कीनउ ।
नानक लाज बिरद की राखहु नामु तुहारउ लीनउ ॥३॥

(१०)

मन रे गहिओ न गुर उपदेसु ।
कहा भइओ जउ मूड मूडाइओ भगवउ कीनो भेसु ॥१॥रहाउ॥
साच छाडि कै झूठह लागिओ जनमु अकारथु खोइओ ।
करि परपंच उदर निज पोखिओ पसु की निआई सोइओ ॥१॥
राम भजन की गति नहीं जानी माइआ हाथि बिकाना ।
उरझि रहिओ बिखिअन संगि बउरा नामु रतनु बिसराना॥२॥
रहिओ अचेतु न चेतिओ गोबिंद बिरथा अउध सिरानी ।
कहु नानक हरि बिरदु पछानउ भूले सदा परानी ॥३॥

(११)

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै ।
सुख सनेहु अरु भै नही जा कै कंचन माटी मानै ॥ रहाउ॥
नह निंदिआ नह उसतति जा कै लोभु मोहु अभिमाना ।
हरख सोग ते रहै निआरउ नाहि मान अपमाना ॥१॥
आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा ।
कामु क्रोधु जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रह्म निवासा ॥२॥
गुर किरपा जिह नर कउ कीनी तिह इह जुगति पछानी ।
नानक लीन भइओ गोबिंद सिउ जिउ पानी संगि पानी ॥३॥

(१२)

प्रीतम जानि लेहु मन माही ।
अपने सुख सिउ ही जगु फांधिओ को काहू को नाही ॥रहाउ॥
सुख मै आनि बहुतु मिलि बैठत रहत चहूँ दिसि घेरै ।
बिपति परी सभ ही संगु छाडित कोऊ न आवत नेरै ॥१॥

घर की नारि बहुतु हितु जा सिउ सदा रहत संगि लागी ।
जब ही हंसि तजी इह काइआ प्रेत प्रेत करि भागी ॥२।
इह बिधि को बिउहारु बनिओ है जा सिउ नेहु लगाइओ ॥
अंत बार नानक बिनु हरि जी कोऊ कामि न आइओ ॥ ३ ।

॥ राग धनासरी ॥

(१)

काहे रे बन खोजन जाई ।
सर्ब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई ॥रहाउ।
पुहप मधि जिउ बासु बसतु है मुकर माहि जैसे छाई ।
तैसे ही हरि बसे निरंतरि घट ही खोजहु भाई ॥१।
बाहरि भीतरि एको जानहु इहु गुर गिआनु बताई ॥
जन नानक बिनु आपा चीनै मिटै न भ्रम की काई ॥२।

(२)

साधो इहु जगु भरम भुलाना ।
राम नाम का सिमरनु छोडिआ माइआ हाथि बिकाना । रयाउ ।
मात पिता भाई सुत बनिता ता कै रस लपटाना ।
जोबनु धनु प्रभता कै मद मै अहि निसि रहै दिवाना ॥१।
दीन दइआल सदा दुख भंजन ता सिउ मनु न लगाना ।
जन नानक कोटन मै किनहू गुरमुखि होइ पछाना ॥२।

(३)

तिह जोगी कउ जुगति न जानउ ।
लोभ मोह माइआ ममता फुनि जिह घट माहि पछानउ॥रहाउ
परनिंदा उसतति नह जा कै कंचन लोह समानो ॥
हरख सोग ते रहै अतीता जोगी ताहि बखानो ॥१।

चंचल मनु दह दिसि कउ धावत अचल जाहि ठहिरानो ।
कहु नानक इह बिधि को जो नरु मुकति ताहि तुम मानो ॥२।

(४)

अब मै कउनु उपाउ करउ ।
जिह बिधि मन को संसा चूकै भउ निधि पार परउ । रहाउ ।
जनमु पाइ कछु भलो न कीनो ताते अधिक डरउ ।
मन बच क्रम हरि गुन नहीं गाए यह जीअ सोच धरउ ॥ १।
गुरमति सुनि कछु गिआनु न उपजिओ पसु जिउ उदरु भरउ ।
कह नानक प्रभ बिरदु पछानउ तब हउ पतित तरउ । २ ।

राग जैतसरी

(१)

भूलिओ मनु माइआ उरझाइओ ।
जो जो कर्म कीओ लालच लगि तिह तिह आपु बंधाइओ ॥रहाउ।
समझ न परी बिखै रस रचिओ जसु हरि को बिसराइओ ।
संगि सुआमी सो जानिओ नाहिन बन खोजन कउ धाइओ॥१।
रतनु नामु घट ही के भीतरि ताको गिआनु न पाइओ ।
जन नानक भगवंत भजन बिनु बिरथा जनमु गवाइओ ॥२।

(२)

हरि जू राखि लेहु पति मोरी ।
जम को त्रास भइओ उर अंतरि सरन गही किरपानिधि तोरी।रहाउ
महा पतित मुगध लोभी फुनि करत पाप अब हारा ।
भै मरबे को बिसरत नाहनि तिह चिंता तनु जारा ॥ १ ।
कीए उपाव मुकति के कारनि दह दिसि कउ उठि धाइआ ।
घट ही भीतरि बसै निरंजनु ता को मर्मु न पाइआ ॥ २ ॥

नाहिन गुनु नाहिन कछु जपु तपु कउन कर्मु अब कीजै ।
नानक हारि परिओ सरनागति अभै दानु प्रभ दीजै ॥ ३ ।

(३)

मन रे साचा गहो बिचारा ।
राम नाम बिनु मिथिआ मानो सगरो इहु संसारा ॥ रहाउ ।
जा कउ जोगी खोजत हारे पाइओ नाहि तिह पारा ।
सो सुआमी तुम निकटि पछानो रूप रेख ते निआरा ॥ १ ।
पावन नामु जगत मै हरि को कबहू नाहि संभारा ।
नानक सरनि परिओ जगबंदन राखहु बिरद तुहारा ॥ २ ।

राग तिलंग काफी

(१)

चेतना है तउ चेत लै निसि दिनि मै प्रानी ।
छिनु छिनु अउधु बिहातु है फूटै घट जिउ पानी ॥रहाउ ।
हरि गुन काहि न गावही मूरख अगिआना ।
झूठै लालचि लागि कै नहि मरनु पछाना ॥ १ ।
अजहू कछु बिगरिओ नही जो प्रभ गुन गावै ।
कहु नानक तिह भजन ते निरभै पदु पावै ॥ २।

(२)

जागि लेहु रे मना जागि लेहु कहा गाफल सोइआ ।
जो तनु उपजिआ संग ही सो भी संग न होइआ ॥ रहाउ ।
मात पिता सुत बंधजन हितु जा सिउ कीना ।
जीउ छूटिओ जब देह ते डारि अगनि मै दीना ॥ १ ॥
जीवत लउ बिउहारु है जग कउ तुम जानउ ॥
नानक हरि गुन गाइ लै सभ सुफन समानउ ॥ २।

(३)

हरि जसु रे मना गाइ लै जो संगी है तेरो ।
अउसरु बीतिओ जातु है कहिओ मानि लै मेरो ॥ रहाउ ।
संपति रथ धन राज सिउ अति नेहु लगाइओ ।
काल फास जब गलि परी सभ भइओ पराइओ ॥ १ ।
जानि बूझि कै बावरे तै काजु बिगारिओ ।
पाप करत सुकचिओ नहीं नह गरबु निवारइओ ॥ २ ।
जिह बिधि गुर उपदेसिआ सो सुनु रे भाई ।
नानक कहत पुकारि कै गहु प्रभ सरनाई ॥ ३ ।

राग बिलावल दुपदे

(१)

दुख हरता हरि नामु पछानो ।
अजामलु गनका जिह सिमरत मुकति भए जीअ जानो । रहाउ ॥
गज की त्रास मिटी छिनहू महि जब ही रामु बखानो ।
नारद कहत सुनत ध्रूअ बारिक भजन माहि लपटानो ॥ १ ।
अचल अमर निरभै पदु पाइओ जगत जाहि हैरानो ।
नानक कहत भगत रछक हरि निकटि ताहि तुम मानो ॥२॥

(२)

हरि के नाम बिना दुखु पावै ।
भगति बिना सहसा नह चूकै गुर इह भेदु बतावै ॥ रहाउ॥
कहा भइओ तीरथ ब्रत कीए रामसरनि नही आवै ।
जोग जग्ग निहफल तिह मानहु जो प्रभ जसु बिसरावै । ।१॥
मान मोह दोनों कउ परहरि गोबिन्द के गुन गावै ।
कहु नानक इह बिधि को प्रानी जीवन मुकति कहावै ॥ २ ॥

(३)

जा मै भजनु राम को नाही ।

तिह नर जनमु अकारथ खोइआ यह राखहु मन माही ॥ रहाउ ।

तीरथ करै ब्रत फुनि राखै नह मनूआ बसि जा को ।

निहफल धर्म ताहि तुम मानो साचु कहत मै या कउ ॥ १ ।

जैसे पाहनि जल महि राखिओ भेदै नाहि तिह पानी ।

तैसे ही तुम ताहि पछानो भगतिहीन जो प्रानी ॥ २ ।

कल मै मुकति नाम ते पावत गुर यह भेद बतावै ॥

कहु नानक सोई नर गरूआ जो प्रभ के गुन गावै ॥ ३ ।

राग रामकली

(१)

रे मन ओट लेहु हरि नामा ।

जाकै सिमरनि दुरमति नासै पावहि पदु निरबाना । रहाउ ।

बडभागी तिहि जन कउ जानउ जो हरि के गुन गावै ।

जनम जनम के पाप खोइ कै फुनि बैकुंठ सिधावै ।१ ।

अजामलु कउ अंतकाल मै नाराइन सुधि आई

जा गति कउ जोगीसुर बाछत सो गति छिन महि पाई ॥ २ ।

नाहिन गुन नाहनि कछु बिदिआ धर्मु कउनु गजि कीना ।

नानक बिरद राम का देखो अभै दानु तिह दीना ॥ ३॥

(२)

साधो कउनु जुगति अब कीजै ।

जा ते दुरमति सगल बिनासै राम भगति मनु भीजै ॥ रहाउ ॥

मनु माइआ मै उरझि रहिओ है बूझै नह कछु गिआना ।

कउनु नामु जगु जा कै सिमरै पावै पदु निरबाना ॥ १ ॥

भए दइआल क्रपाल संत जन तब इह बात बताई ।
सर्ब धर्म मानो तिह कीए जिह प्रभ कीरति गाई ॥ २ ।
राम नाम नर निसि बासुर मै निमख एक उरधारै ।
जम को त्रासु मिटै नानक तिह अपुनो जनमु सवारै ॥ ३ ।

(३)

प्रानी नाराइन सुधि लेह ।
छिनु छिनु अउध घटै निसि बासुर वृथा जातु है देह ॥रहाउ॥
तरनापो बिखिअन सिउ खोइओ बालपनु अगिआना ।
बिरध भइओ अजहू नही समझै कउन कुमति उरझाना ॥१॥
मानस जनमु दीओ जिह ठाकुर सो तै किउ बिसराइओ ।
मुकति होत नर जा कै सिमरै निमख न ताको गाइओ ॥२॥
माइआ को मदु कहा करतु है संगि न काहू जाई ।
नानक कहत चेति चिंतामनि होइ है अंति सहाई ॥३॥

राग मारू

(१)

हरि को नामु सदा सुखदाई ।
जा कउ सिमरि अजामलु उधरिओ गनका हू गति पाई ॥रहाउ॥
पंचाली कउ राज सभा मै राम नाम सुधि आई ।
ता को दूखु हरिओ करुणामै अपनी पैज बढाई ॥ १ ॥
जिह नर जसु किरपानिधि गाइओ ताको भइओ सहाई ।
कहु नानक मै इही भरोसै गही आन सरनाई ॥ २ ॥

(२)

अब मै कहा करउ री माई ।
सगल जनमु बिखिअन सिउ खोइआ सिमरिउ नाहि कहाई॥रहाउ॥

काल फास जब गर मै मेली तिह सुधि सभ बिसराई ।
राम नाम बिनु या संकट मै को अब होत सहाई ॥ १ ॥
जो संपति अपनी करि मानी छिन मो भई पराई ।
कहु नानक यह सोच रही मनि हरि जसु कबहू न गाई ॥२॥

(३)

माई मै मन को मानु न तिआगिओ ।
माइआ के मदि जनमु सिराइओ राम भजन नही लागिओ ॥रहाउ॥
जम को डंडु परिओ सिर ऊपरि तब सोवत तै जागिओ ।
कहा होत अब कै पछुताए छूटत नाहनि भागिओ ॥ १ ॥
इह चिंता उपजी घट मै जब गुरचरनन अनुरागिओ ।
सुफलु जनमु नानक तब हूआ जो प्रभ जसु मै पागिओ ॥२॥

राग बसंतु हिंडोल

(१)

साधो इहु तनु मिथिआ जानउ ।
या भीतरि जो रामु बसतु है साचो ताहि पछानो ॥ रहाउ ।
इहु जगु है संपति सुपने की देखि कहा ऐडानो ।
संगि तिहारै कछू न चालै ताहि कहा लपटानो ॥ १ ।
उसतति निंदा दोऊ परहरि हरि कीरति उर आनो ।
जन नानक सभ ही मै पूरन एक पुरख भगवानो ॥ २ ।

(२)

पापी हीऐ मै कामु बसाइ ।
मनु चंचलु या ते गहिओ न जाइ ॥ रहाउ ।
जोगी जंगम अरु संनिआस
सभ ही परि डारी इह फास ॥ १ ।

जिहि जिहि हरि को नामु सम्हारि ।
ते भवसागर उतरे पारि ॥ २ ।
जन नानक हरि की सरनाइ ।
दीजै नामु रहै गुन गाइ ॥ ३ ॥

(३)

माई मै धनु पाइओ हरि नामु ।
मन मेरो धावन ते छूटिओ करि बैठो बिसरामु ॥ रहाउ ।
माइआ ममता तन ते भागी उपजिओ निरमल गिआनु ।
लोभ मोह इह परसि न साकै गही भगति भगवानं ॥ १ ।
जनम जनम का संसा चूका रतनु नामु जब पाइआ ।
तृस्ना सकल बिनासी मन ते निज सुख माहि समाइआ । २ ।
जा कउ होत दइआलु किरपानिधि सो गोबिंद गुन गावै ।
कहु नानक इह बिधि की संपै कोऊ गुरमुखि पावै ॥ ३ ।

(४)

मन कहा बिसारिओ राम नामु ।
तनु बिनसै जम सिउ परै कामु ॥ रहाउ ।
इहु जगु धूए का पहार ।
तै साचा मानिआ किह बिचारि ॥ १ ।
धनु दारा संपति गृह ।
कछु संगि न चालै समझ लेह ॥ २ ।
इक भगति नाराइन होइ संगि ।
कहु नानक भजु तिह एक रंगि ॥ ३ ।

(५)

कहा भूलिओ रे झूठे लोभ लाग ।

कछु बिगरिओ नाहनि अजहु जाग ॥ रहाउ ।
मम सुपनै कै इहु जगु जानु ।
बिनसै छिन मै साची मानु ॥ १ ।
संगि तेरै हरि बसत नीत ।
निस बासुर भजु ताहि मीत ॥ २ ।
बार अंत की होइ सहाइ ।
कहु नानक गुन ता के गाइ ॥ ३॥

राग सारंग

(१)

हरि बिनु तेरो को न सहाई ।
कां की मात पिता सुत बनिता को काहू को भाई ॥ रहाउ ।
धनु धरनी अरु संपति सगरी जो मानिओ अपनाई ।
तन छूटै कछु संगि न चालै कहा ताहि लपटाई ॥ १ ॥
दीन दइआल सदा दुख भंजन ता सिउ रुच न बढाई ।
नानक कहत जगत सभ मिथिआ जिउ सुपना रैनाई ॥ २ ॥

(२)

कहा मन बिखिआ सिउ लपटाही ।
या जग मै कोऊ रहनु न पावै इक आवहि इक जाही ॥ रहाउ ।
कां को तनु धनु संपति कां की का सिउ नेहु लगाही ।
जो दीसै सो सगल बिनासै जिउ बादर की छाही ॥ १ ॥
तजि अभिमानु सरणि संतन गहु मुकति होहि छिन माही ॥
जन नानक भगवंत भजन बिनु सुखु सुपनै भी नाही ॥ २ ।

(३)

कहा नर अपनो जनमु गवावै ।

माइआ मदि बिखिआ रसि राचिओ राम सरनि नही आवै॥रहाउ।
इहु संसारु सगल है सुपनो देखि कहा लोभावै।
जो उपजै सो सगल बिनासै रहनु न कोऊ पावै॥ १ ।
मिथिआ तनु साचो करि मानिओ इह बिधि आपु बंधावै।
जन नानक सोऊ जग मुकता राम भजन चितु लावै॥ २ ।

(४)

मन करि कबहू न हरि गुन गाइओ ।
बिखिआसकति रहिओ निसि बासुर कीनो अपनो भाइओ॥ रहाउ।
गुर उपदेसु सुनिओ नहि काननि परदारा लपटाइओ ।
पर निंदा कारनि बहु धावत समझिओ नह समझाइओ ॥१।
कहा कहउ मै अपुनी करनी जिह बिधि जनमु गवाइओ ।
कहि नानक सभ अउगन मो मै राखि लेहु सरनाइओ ॥ २ ।

राग जैजावंती

(१)

राम सिमर राम सिमर इहै तेरै काजि है ।
माइआ को संगु तिआगि प्रभ जू की सरनि लागि ।
जगत सुख मानु मिथिआ झूठो सभ साजु है ॥१॥ रहाउ ।
सुपने जिउ धनु पछानु काहि पर करत मानु ।
बारू की भीत जैसे बसुधा को राजु है ॥१॥
नानक जन कहत बात बिनसि जैहै तेरो गात ।
छिनु छिनु करि गइओ कालु तैसे जातु आजु है ॥२॥

(२)

राम भजु राम भजु जनमु सिरातु है ।
कहउ कहा बार बार समझत नह किउ गवार ।

बिनसत नह लगै बार ओरे सम गातु है ॥रहाउ॥
सगल भरम डारि देह गोबिंद को नामु लेह ।
अंति बार संगि तेरै इहै एक जातु है ॥१॥
बिखिआ बिख जिउ बिसारि प्रभ कौ जसु हीए धार ।
नानक जन कहि पुकारि अउसरु बिहातु है ॥२॥

(३)

रे मन कउन गति होइ है तेरी ।
इह जग मै राम नामु सो तउ नही सुनिओ कान ॥
बिखिअन सिउ अति लुभानि मति नाहिन फेरी ॥ रहाउ ।
मानस को जनमु लीन सिमरनु नह निमख कीन ।
दारा सुख भइओ दीन पगहु परी बेरी । १ ॥
नानक जन कहि पुकारि सुपने जिउ जगु पसारि ।
सिमरत नह किउ मुरारि माइआ जा की चेरी ॥२॥

(४)

चीत जैहै बीत जैहै जनमु अकाज रे ।
निस दिन सुनि कै पुरान समझत नह रे अजान ।
काल तउ पहूचिओ आनि कहा जैहै भाजि रे ॥१॥ रहाउ ।
असथिरु जो मानिओ देह सो तउ तेरउ होइ है खेह ।
किउ न हरि को नामु लेह मूरख निलाज रे ॥१॥
राम भगति हीए आनि छाडि दे तै मन को मानु ।
नानक जन इह बखान जग मै बिराजु रे ॥२॥

॥ समाप्त ॥

भाई गुरदास जी

(संक्षिप्त जीवन वृत्तान्त)

भाई गुरदास जी के पिता गुरु अमर दास साहिब (तीसरे गुरु) के छोटे भाई गांव बासर के (जिला अमृतसर) के वासी थे। जब गुरु अंगद साहिब (दूसरे गुरु) की आज्ञानुसार (गुरु) अमर दास जी बासर के से गोइन्दवाल (तहिसील तरन तारन) आ बसे तो आप के छोटे भाई भी आपके साथ ही यहां आ गये। भाई गुरदास जी का जन्म, गोइन्दवाल में संवत १६०८, सन् १५ ४१ में हुआ।

छोटी अवस्था में ही उन्हें पढ़ने लिखने और कविता करने का शौक पैदा हो गया। ज्यों २ बड़े होते गए, सत्गुरु में श्रद्धा बढ़ती गई और गुरुबाणी के रसिक होते गए। सन् १५७४ में (ज्योतिमें ज्योति मिला लेने से कुछ समय पहिले) गुरु अमरदास जी ने भाई गुरदास जी को सिख-धर्म के प्रचारिक नियत करके आगरे की ओर भेज दिया। आगरेमें भाई साहिब ने उस स्थान पर "भोग१" रक्खा, जहां आज कल बाबा मौजप्रकाश की धर्म शाला है। आगरे से उज्जैन आदि शहरों में धर्म प्रचार करते हुए बुरहान पुर आए। यहीं सन् १५८१ में इन्हें खबर मिली कि गुरु राम दास जी ज्योति में ज्योति मिला गए हैं। और उनकी जगह गुरु अर्जुन साहिब गुरु गद्दी पर बैठे हैं। यह भी उन के दर्शनार्थ आ गए और गुरु जी के पास रहने लग गए।

---

(१) भोग—गुरु ग्रन्थ साहिब के अखण्ड पाठ की भोग कहते हैं।

भाई गुरदास जी अपने समय के उच्च कोटि के विद्वान भी थे। गुरु ग्रन्थ साहिब की "बीड़[1]" लिखने का काम गुरु अर्जुन साहिब ने इन के सिपुर्द किया, जो सन् १६०४, संवत १६६१ में जाकर समाप्त हुआ।

अगले साल सत्गुरु जी ने इन्हें सिख-धर्म का प्रचार करने के लिए सिंध की ओर भेज दिया। सिन्ध से आप कन्धार और काबुल गए और बाद में पोठोहार की ओर से होते हुए अमृतसर पहुंचे पर इन के पहुंचने से पहले ही गुरु अर्जुन साहिब जहांगीर-और चन्दू के हाथों शहीद हो गए थे और गुरु हरिगोविन्द साहिब गद्दी पर विराजमान हो चुके थे।

गुरु हरिगोविन्द साहिब, सन् १६१६ में (सं० १६७३ वि० में)' अकाल तख्त[2]'जो सन् १६०९ में तैयार किया गया था की सेवा भाई गुरदासजी को और हरि मन्दिरकी सेवा बाबा बुड्ढाजी को सौंप कर आप आगरा आदि शहरों की ओर चले गये। वहीं उन दिनों उन्हें जहांगीर के हुकम से ग्वालियर के किले में भी रहना पड़ा। इधर भाई गुरदास और बाबा बुड्ढा जी ने एक मर्यादा चलाई जो कि आज तक चली आ रही है। वह यह कि सन्ध्या समय "रहिरास[3]" के पाठ के बाद "संगत[4]" श्री अकाल तख्त से चल कर बाबा "अटल" साहिब के गुरद्वारे से होकर श्री हरि मन्दिर साहिब आकर विश्राम करती है। जो शब्द तब पढ़ने शुरु किये थे, वही आज तक पढ़े जाते हैं। इस मर्यादा का नाम है "चौकी साहिब"।

---

१ 'ग्रन्थ-संग्रह' २ अकाल तख्त, अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर का एक हिस्सा। ३ रहिरास-गुरु साहिब की एक वाणी। ४ संगत—जनता

लिखी गईं और कवित्त काशी आदि में।

सिख-इतिहास बतलाता है कि जब सन १६०४ में गुरु ग्रन्थ साहिब की "बीड़" तैयार हुई थी तो उस वक्त तक भाई गुरदास जी काफी 'वारें' लिख चुके थे पर कवित्तों की रचना के विषय में कोई जिक्र नहीं मिलता। हालांकि भाई गुरदास साहिब सन १५७४ से १५८१ तक आगरे आदि में सिख धर्म का प्रचार करते रहे। ऐसा प्रतीत होता है कि भाई साहिब ने कवित्त तब रचे होंगे जब वह दूसरी बार सन १६२६ में कुछ महीनों के लिए बनारस गए थे।

कवित्तों का भाव

सारे कवित्त एक ही विचार माला में पिरोए हुए हैं। उन का केन्द्रस्थल है—"साधु समाज"। इन सारे कवित्तों को विचारों की समता के अनुसार नीचे लिखे ७ हिस्सों में बांटा जा सकता है :—

१ (नं० १ से ३४ तक)

जो मनुष्य और सब आश्रय छोड़ कर और 'मैं हूं' त्याग कर अपने आप को गुरु के उपदेश में लीन कर लेता है, उस को माया के दोष छू नहीं सकते। उस का जीवन ऊंचा और पवित्र हो जाता है।

२ (नं० ३५ से ११८ तक)

पवित्र जीवन के लिए मनुष्य को स्वाभाविक ही पवित्र पथ की जरूरत पड़ती है। यह पथ गुरु के जीवन से ही मिल सकता है।

गुरु को चारों ओर निराकार की ज्योति नजर आती है। गुरु के भीतर बेगानापन जरा भी नहीं होता। गुरु अपने सुख को, अपने आप को और अपने परिवार तक को लोगों के भले के लिए न्योछावर कर देता है। इतने पर भी उस का श्वास मात्र तक भी कर्ता के स्मरण और उस के शुक्र बिना खाली नहीं जाता। वह प्रतिक्षण कर्ता को याद करता और उस का धन्यवाद करता रहता है।

शिष्य ऐसे गुरु के द्वार पर सिदक और भरोसे से आता है। गुरु के अनुभव को अपना अनुभव बनाता है और अपने हृदय को गुरु वाणी के रंग में रंग लेता है। गुरु के जीवन कौतुक को अपनी आंखों के सामने रखता है और इस प्रकार शिष्य के हृदय में प्रेम का साक्षातकार हो जाता है। वह सब में "प्यारे" को देखता है और अपने सुखों को, अपने आप को प्यारे के इन्सानो पर कुरबान कर देता है।

ख्याल यह है कि अज्ञ शिष्य गुरु के चरणों में कैसे आ पहुंचे? उसे गुरु पर सिदक भरोसा कैसे आए? कोई मुसाफिर किसी अपरिचित देश के मार्ग पर तभी पांव धरता है, जब उसे उस देश के गुण किसी विश्वस्त जरिये से मालूम पड़ जाते हैं। इसी प्रकार अज्ञ शिष्य को भी गुरु के प्यार की सार वही बतला सकते हैं जो आप उस प्यार का आनन्द ले रहे होते हैं। दूसरे नहीं।

अतः गुरु के सच्चे शिष्यों की 'संगति' साधुजनों की संगति ही एक रास्ता है, जहां पूर्ण-ब्रह्म गुरु को मिल कर उस जैसा बना जा सकता है।

३. (११९ से १४३ तक)

ऊपर लिखे गुण युक्त दो गुरु शिष्यों की एकत्रता ही साधु समाज है। पांचों में परमेश्वर आप आ जाता है, इस से अधिक की उपमा ही व्यर्थ है। साधु समाज गुरु की दोकान है, जहाँ गुरुमुख १ सत्यनाम का व्योपार करते हैं। जैसे बादल आपसमें घुल मिलकर घटा बांधते हैं, गर्जते हैं, चमकते है और वर्षा की झड़ी लगा देते हैं इसी प्रकार शिष्य मिलकर कीर्तन करते हैं, खेलतेहैं और नामामृत की वर्षा करते हैं। माया की अग्नि में जलते हुए जीव वहां पहुंचते हैं, उन के हृदय में शीतलता आ जाती है।

४. (१४४ से २३२ तक)

मनुष्य का मन स्वभाविक ही चञ्चल है। चञ्चल मन को दुर्गति से बचाने के लिए रास्ता हो यह है कि मनुष्य भले लोगों की संगति करे। दूध को थोड़ी सी दही की जाग लगा देने से दही बन जाता है पर थोड़ी सी कांजी डाल देने से फट जाता है। यही बात मन की है। मन भी थोड़े में ही उपकारी या विकारी बन जाता है। इस बातकी बहुत जरूरत है कि मनुष्य हर समय गुरु के शब्द में ध्यानावस्थित रहे पर जांच साधु समाज में ही होती जाती है। अन्यत्र नहीं।

एक ओर मन चञ्चल है, दूसरी ओर कामादि विकार बड़े बलवान हैं। अकेले-अकेले मनुष्यको तुरन्त मार लेते हैं। पर जैसे [illegible] नहीं एकत्र हो कर मार से बच जाती हैं

ऐसे ही मनुष्य साधु समाज में रह कर कामादि की मार से बच जाता है।

माया-जनित जीवन पशू-जीवन है। इस में कभी स्फुन नहीं होता कि मैं प्रभु से बिछुड़ा हुआ हूं। पति से मिली हुई प्रेम रस में सरोबार हुई अन्य प्रियाओं को देख कर जैसे पति से बिछुड़ी हुई स्त्री के दिल पर चोट लगती है और उसे बिछुड़ना अनुभव होता है, ऐसे ही साधु समाज की कृपा से माया में मस्त मन जागृत हो उठता है।

५. (२३४ से २६४ तक)

साधु समाज में मन को कैसे लगायें ?

यह बात आम देखने में आती है कि मनुष्य का मन जिस तरह धन, पुत्र और स्त्री से स्नेह करता है, उसी तरह साधु समाज से नहीं करता। क्योंकि

(अ) मनुष्य माया के मोह से बने हुए पिछले स्वभाव को सत्संग में आकर भी नहीं छोड़ता। जैसे पत्थर पानी में पड़ा हुआ भीगता नहीं, जैसे वर्षा ऋतु में भी करील को पत्ते नहीं लगते ऐसे ही वह मनुष्य साधु समाज में आयु काट कर भी जैसे का तैसा ही रहता है।

(आ) विद्यार्थी पाठ की ओर ध्यान न दे, समझे बिना ही दिखाने की खातिर अन्य विद्यार्थियों की तरह कह दे कि समझ आ गई है। उसे उसताद से कोई लाभ नहीं हो सकता। व्याध का झुकना, बगुले का ध्यानावस्थित होना, वेश्या का शृंगार, यह सब विकार युक्त ही कर देते हैं

सत्गुरु की बाणी मानों ईश्वरीय देश के लिये पंख हैं।

साधु समाज में कीर्तन अनायास ही मनुष्य का जीवन ऊंचा कर देता है। उस की कृपा से माया में भरमता हुआ मन स्वभावत: निःचल हो जाता है पर जल रहे दीपक की सार उस केबुझ जाने से ही मालूम पड़ती है।

७ (३५२ से ५५६ तक) साधु समाज की सभ्यता—मर्यादा

सांसारिक काम धन्दों की ओर, कलाओं की तर्फ अन्य विद्या आदि की ओर ध्यान देकर देख लीजिए, जो जो मनुष्य इन को सीख कर कोई लाभ प्राप्त करते हैं, उन्हें जरूर किन्हीं खास नियमों में रहना पड़ता है। जो मनुष्य उस मर्यादा को बन्धन समझ कर उस से दूर भागता है, अपने और आप को आजाद बनाने का यत्न करता है, वह कोई काम भी पूरा नहीं कर सकता।

साधु समाज एक पाठशाला है। यहां जो भी जिज्ञासू कोई गुण ग्रहण करने आएगा उसे यहां की मर्यादा में रहना ही होगा। सांसारिक कार व्योहार सीखने के लिए यह जरूरी है कि मनुष्य अपनी बुद्धि का बल छोड़ कर गुरु की बुद्धि का आश्रय ले। साधु समाज में भी यह जरूरी है कि जिज्ञासू सत्गुरु के उपदेश का आश्रय ग्रहण करे।

साधु समाज की मर्यादा का सब से बड़ा अंग यह है कि जिज्ञासू के हृदय में सिदक भरोसा हो। उसे यह यकीन हो कि जिस गुरु के पीछे मैं लगा हूं, वह सदा दयालु है वह सदा सावधान रह कर शिष्य को विकारों से बचाता है।

यह सिदक भरोसा हृदय में रखकर शिष्य गुरु के शब्द

मन पंछी को यह पंख लगाएँ तो वह सीधे ईश्वरीय देश में उड़ा कर ले जाते हैं। अतः साधु समाज में आकर मन को गुरु-शब्द में जोड़ने का अभ्यास करना चाहिये।

६ (३६४ से ३५१ तक) सत्संग करने का लाभ

साधु समाज एक स्रोत है, जहाँ से मनुष्य ऊँचे जीवन के गुण हासिल करता है। परमात्मा सर्वदा साधु समाज में साक्षात विराजमान रहता है।

जो मनुष्य सत्संग में रह कर गुरु के शब्द में मन को जोड़ने का अभ्यास पक्का करता है, वह माया में लिप्त रहता हुआ भी माया के प्रभाव से प्रभावित न होकर सच्चा एकाकी बन जाता है। कामादि विकार उसे ज़रा भी व्याप नहीं सकते।

साधु समाज में कीर्तन अनायास ही मनुष्य का जीवन ऊंचा कर देता है। उस की कृपा से माया में भरमता हुआ मन स्वभावतः निःचल हो जाता है पर जल रहे दीपक की सार उस केबुझ जाने से ही मालूम पड़ती है।

७ (३५२ से ५५६ तक) साधु समाज की सभ्यता–मर्यादा

सांसारिक काम धन्दों की ओर, कलाओं की तर्फ अन्य विद्या आदि की ओर ध्यान देकर देख लीजिए, जो जो मनुष्य इन को सीख कर कोई लाभ प्राप्त करते हैं, उन्हें जरूर किन्हीं खास नियमों में रहना पड़ता है। जो मनुष्य उस मर्यादा को बन्धन समझ कर उस से दूर भागता है, अपने और आप को आजाद बनाने का यत्न करता है, वह कोई काम भी पूरा नहीं कर सकता।

साधु समाज एक पाठशाला है। यहां जो भी जिज्ञासू कोई गुण ग्रहण करने आएगा उसे यहां की मर्यादा में रहना ही होगा। सांसारिक कार व्योहार सीखने के लिए यह जरूरी है कि मनुष्य अपनी बुद्धि का बल छोड़ कर गुरु की बुद्धि का आश्रय ले। साधु समाज में भी यह जरूरी है कि जिज्ञासू सत्गुरु के उपदेश का आश्रय ग्रहण करे।

साधु समाज की मर्यादा का सब से बड़ा अंग यह है कि जिज्ञासू के हृदय में सिदक भरोसा हो। उसे यह यकीन हो कि जिस गुरु के पीछे मैं लगा हूं, वह सदा दयालु है वह सदा सावधान रह कर शिष्य को विकारों से बचाता है।

यह सिदक भरोसा हृदय में रखकर शिष्य गुरु के शब्द

जैसे २ माया में फंसता है, तैसे २ नाम स्मरण और भक्ति भी दूर हटती जाती है। सच्चा गुरु-सिख मायाधारी होता हुआ भी योगी है, वह हक की कमाई हुई माया से सेवा और परोपकार करता है।

यदि गुरुसिख को गुरुद्वारे आदि में पूजा का दान उपयोग करने का अवसर प्राप्त हो जाए तो वह दान उस के लिए तभी ग्रहण हो सकता है यदि वह तन मन से गुरु की बतलाई हुई सेवा करता रहे। सेवा के बिना पूजा का प्रसाद सारे गुण नष्ट कर देता है। सेवा के बिना पूजा का प्रसाद कच्चे पारे जैसा है।

गुरु-सिख पर तन, पर धन और परअपवाद से सदा बचने का यत्न करता है। इन तीन दोषों से मनुष्य प्रेम सागर गुरु में निवास करता हुआ भी प्रेमरस नहीं पान कर सकता

सत्गुरु और सत्गुरु की वाणी में कोई भेद नहीं है। जब तक गुरुवाणी में लीन न हो जायें तब तक यह कहना कि मैं ने गुरु का दर्शन कर लिया है, या मैंने गुरु का उपदेश सुन लियाहै, कोई अर्थ नहीं रखता।

यह भ्रम है कि संसार में निरा पाप ही पाप है और इस लिए गृहस्थ्य धर्म छोड़कर जंगलों में चले जाना चाहिये। ससार में भले भी हैं और बुरे भी। गार्हस्थ्य को त्यागने वाले भी गृहस्थी का ही आश्रय ढूंडते फिरते हैं। गार्हस्थ्य में रह कर भी गुरु की शिक्षा पर चलते हुए भी मन के विकारों को रोकें। पर यदि गृहस्थी बन कर गुरुमुखों का सत्संग नहीं किया, करोड़ों पाप करके माया एक २ करते गये और फिर भी गार्हस्थ्य को

गुरु गोविन्द सिंह जी का

संक्षिप्त जीवन वृत्तान्त

पौष शु० ७ सम्वत १७२३ (दिसम्बर २३ सन १६६६ ई०) को गुरु साहिब का जन्म हुआ। पिता का नाम गुरु तेग बहादुर (नौवें गुरु) और माता का नाम गुजरी जी।

जिन दिनों गुरु साहिब का जन्म हुआ, गुरु तेग बहादुर परिवार को पटना में छोड़ कर आप राजा जय सिंह के साथ बंगाल आसाम को गए हुए थे। गुरु गोविन्द सिंह जी के जन्म की खबर उन्हें आसाम में मिली।

राजा जय सिंह औरंगजेब की आज्ञानुसार, सेना लेकर आसाम पर धावा बोलने जा रहे थे। गुरु तेग बहादुर ससाराम के नजदीक उन्हें मिले और उन्हों ने दोनों ओर सुलह सफाई की बातें चला कर खून की नदीयें जो बहने वाली थीं, रोक दीं।

आसाम से लौट कर गुरु तेगबहादुर पटने में गये और कुछ दिन वहां रहे। फिर परिवार को वहीं रहने देकर आप पंजाब में आगये। इस प्रकार गुरु गोविन्द सिंह, सन १६७१ तक माता और दादी सहित पटने ही में रहे। वहां रहने वाले पण्डित शिव दत्त, राजा फतह चन्द और उस की स्त्री गुरु साहिब पर बहुत श्रद्धा रखते थे।

सन १६७१ से सन १६८४ तक आनंद पुर में रहे।

१. ११ नवम्बर १६७५ को पिता गुरु तेग बहादुर साहिब

था और बादशाह के उकसाने से वह गुरु साहिब का शत्रु बना हुआ था। विवाह के समय सब पहाड़ी राजा गढ़वाल में आए हुए थे। गढ़वाल से लौटते हुए इस कहलूरिये ने सत्गुरु पर हमला कर दिया पर भंगाणी के नज़दीक हार खा कर भाग गया। साथ के साथी राजा भी।

अक्तूबर सन् १६८७ में गुरु साहिब आनन्द पुर में लौट आए।

अक्तूबर सन् १६८७ से दिसम्बर १७०४ तक।

१. सन १६८९ में नदौण का जंग हुआ। साम्हने जम्मू का नवाब अल्फ खां था। यह नवाब पहाड़ियों पर चढ़ आया था।

२. सन १६९० में हुसैनी का युद्ध हुआ। हुसैनी को राजा लोग चढ़ा लाए थे।

३. पांच सिक्खों को काशी में संस्कृत पढ़ने भेजा। "निर्मला" सम्प्रदाय इन्हीं पांच सिक्खों द्वारा चली।

४. भाई नन्द लाल सिक्ख बने।

५. सन १६९९ में वैशाखी वाले दिन अमृतपान करा कर खालसा पंथ तैयार किया।

६. होलियों की जगह, शस्त्र-विद्या के अभ्यासार्थ "होला" जारी किया।

७. सन १७०४ में पहाड़ी राजा, शाहीफौज, सरहन्द का हाकिम इन सब ने ६ महीने तक आनन्द पुर को घेरे रक्खा। २०. २१. दिसम्बर के बीच की रात को सत्गुरु जी ने आनन्द पुर को छोड़ दिया।

दिसम्बर १७०४ से मई १७०५ तक

१. २२ दिसम्बर सन १७०४ को चमकौर का जंग हुआ। बड़े साहिब जादे यहीं शहीद हुए। खालसा को चमकौर की गढ़ी में गुरुत्व पद दिया।

२२-२३ दिसम्बर की रात को चमकौर से निकल कर सत्गुरु जी "माछूवाड़ा" में पहुंचे। यहीं से "हेहरी" जिला (लुधियान) को गये। यहीं का महन्त कृपालदास "भंगाणी" के जंग में शामिल हुआ था। फिर "जट्टपुरा" में पहुंचे। यहां के चौधरी राय कल्लाह ने माही नाम के हरकारे को सरहंद में भेज कर छोटे साहिब जादों की शहीदी का सन्देश मंगाया। वह साहिब जादे २७ दिसम्बर को शहीद हुए थे।

३. दीना गांव में आकर औरंगजेब को फारसी में एक खत लिखा। यह "जफर नामा" के नाम से मशहूर है। यह खत उन्होंने भाई दयासिंह के हाथ भेजा था।

४. (२१ वैसाख सम्वत १७६२) ८ मई सन १७०५ को मुक्तसर (जिला फिरोजपुर) का जंग हुआ। सरहन्द के सूबेदार वजीर खां ने आकर आक्रमण किया था पर पानी की कमी के कारण उसे लौट जाना पड़ा था।

मई सन १७०५ अक्तूबर १७०६ तक
तलवंडी साबो की में रहे।

५. भाई मणिसिंह से गुरु ग्रन्थ साहिब की नई बीड़ लिखवाई।

अक्तूबर सन १७०६ में पञ्जाब का त्याग

१. औरंगज़ेब को मिलने के लिए दक्षिण की ओर प्रस्थान।

२. राजपूताना में बाघौर गांव के नजदीक औरंगजेब के मरने की खबर मिली।

३. औरंगजेब के पुत्रों में गद्दी के लिए झगड़ा हुआ तो गुरु साहिब ने बहादुर शाह की सहायता की।

४. अगस्त सन १७०७ से नवम्बर सन १७०७ तक आगरे में बादशाह बहादुर शाह के यहां रहे।

५. सितम्बर सन १७०८ तक बादशाह बहादुरशाह के साथ दक्षिण में रहे और फिर वहीं नादेड़ में सदा के लिये रहने लग गए। बादशाह आगे को चल दिया।

६. नादेड़ में वैरागी माधो दास से मिले। उसे शिष्य बनाया वह बंदा सिंह के नाम से मशहूर हुआ। गुरु साहिब ने उसे पञ्जाब की ओर भेजा।

७, सरहन्द के सूबेदार द्वारा भेजे हुए दो मुस्लमानों ने एक दिन सन्ध्या समय बैठे हुए गुरु साहिब पर अचानक और कायरता पूर्ण हमला कर दिया।

८. गुरु ग्रन्थ साहिब को गुरु गद्दी दी।

९. कार्तिक शु० ५ सम्वत १७६५, मु० १० नवम्बर सन १७०८ को गुरु साहिब ज्योति में ज्योति मिला गए और इस नश्वर देह को छोड़ गये। यहाँ गुरुद्वारा अविचल नगर है। गुरु साहिब की कुल आयू ४२ वर्ष रही।

गुरु गोविन्द सिंह जी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले प्रसिद्ध गुरुद्वारे

१. पटना साहिब—यहां सत्गुरु जी का जन्म हुआ। २३ दिसम्बर १६६६ को।

२. पौंटा साहिब - यह रियासत नाहन में यमुना नदी के किनारे है। इसे सत्गुरु ने आप बनवाया था। अक्तूबर सन १६८४ में।

३ केसगढ़ साहिब—आनन्द पुर में। सन १६९९ के वैशाखी वाले दिन यहीं पांच प्यारों को "अमृत" पान कराया और उन्हीं से आप किया।

४. चमकौर साहिब—यहां २२ दिसम्बर सन १७०४ को युद्ध में बाबा अजीत सिंह जी और बाबा जुझार सिंह जी—गुरु साहिब के यह दो पुत्र शहीद हुए।

५. फतह गढ़ साहिब—सरहन्द। यहां २७ दिसम्बर सन १७०४ को सत्गुरु जी के दो छोटे साहिब जादे—बाबा फतह सिंह जी और बाबा जोरावर सिंह जी, जो कि क्रमशः नौ और सात साल के थे, सरहन्द के सूबेदार की आज्ञानुसार जीते जी दिवार में चिना दिए गए।

६. मुक्तसर साहिब—(जिला फिरोज पुर) २१ वैशाख सं० १७६२ मु० ८ मई सन १७०५ को सरहन्द के सूबेदार की सेना से वह सिख लड़ कर शहीद हुए जो आनन्दपुर साहिब के घेरे के समय गुरु साहिब का साथ छोड़ कर चले गये थे और साहिब जादों के शहीद हो जाने की खबर सुन कर पुनः सत्गुरु का साथ देने के लिए आ रहे थे।

७. दम दमा साहिब – रियास्त पटियाला में। यहां सत्गुरु जी मई सन १७०५ से अक्तूबर १७०६ तक रहे थे। यहां का चौधरी डल्ला जो कि सिंह सज जाने के बाद डल्ला सिंह हो गया था—गुरु साहिब जी की सेवा करता रहा।

८. हजूर साहिब (नादेड़) रियास्त हैदराबाद में। बैरागी माधो दास को यहीं आकर गुरु साहिब ने सिख बनाया। सरहन्द के सूबेदार के भेजे हुए दो मुस्लमानों ने यहीं गुरु साहिब पर कायरता पूर्ण कातलाना वार किया और गुरु साहिब नवम्बर सन १७०८ में ज्योति में ज्योति मिला गए।

गुरु गोविन्द सिंह जी के वह मोटे मोटे उद्यम जो जनता को ऊंचे उठाने के लिये उन्होंने किये

१. वीर रस पैदा करने के लिए साहित्य तैयार किया।

२ सिख धर्म के प्रचारार्थ नया केन्द्र रियास्ती इलाके में बनाया। पौंटा साहिब रियास्त नाहन में है।

३. अमृतपान की मर्यादा स्थापित की और प्रत्येक सिख के लिए यह पाबन्दी लगाई कि—

(अ) सिख परस्त्रीगामी न हो।

(आ) नशों का सेवन न करे। खास तौर पर तम्बाकू न पिये।

(इ) मुस्लमान के हाथ का बना मांस न खाय।

(ई) केस, दाढी पूरी रक्खे।

इन चार में से जो भी कोई सिख भूल करता है, उस का

गुरु से आत्मीय सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है, सिख बोली में उसे "पतित" कहा जाता है।

नोटः—तम्बाकू का रिवाज जहांगीर के समय हुआ था। और नशों में से तो भाई चारा में नफरत थी, शराब भंग चर्स आदि को कोई मनुष्य कहीं मजमे में बैठ कर नहीं इस्तेमाल कर सकता था, लेकिन इस नये और गन्दे नशे को लोग पञ्चायतों में भी बैठ कर पी लिया करते थे। इस लिये सत्गुरु जी ने इस के विरुद्ध खास तौर पर ताकीद की। जहांगीर भी लोगों को इस से बचे रहने के लिए शाही फर्मान जारी किया करता था।

शाई मुसलमानों के दबाव में आकर हिन्दू लोगों को अधिकार न था कि वह अपने हाथ से मांस तैयार कर सकें। यह एक राजनीतिक चाल थी गुलाम हिन्दू कौम को निशस्त्र रहने देकर कमजोर किये रहने की ताकि किसी भी बहाने से वह बलवान और सशस्त्र न हो जायें। सत्गुरु जी ने इस हीनपन को दूर करने के लिए खास कारवाई इस्तेमाल की।

४ होलियों में हिंदू काफी गिरावट दिखा रहे थे। रास तमाशे आदि किया कराया करते थे। शहरों में तो एक दूसरे पर मल आदि भी फेंकने का आम रिवाज अभी तक था। गुरु साहिब ने लोगों को इस ओर से हटा कर "होला" जारी किया और इस दिन से शस्त्रादि के कर्तव्य दिखाने का रिवाज डाला। योद्धाओं को इनाम भी दिये जाते थे।

५. गुरु गोविन्द सिंह की तालीम हूबहू वही है जो गुरु नानक देव जी की थी। और रस भरने वाली वाणी रची। इन्हों ने

निम्न लिखित खास दो असूलों पर बहुत जोर दिया :—

(अ) सब से प्यार क्योंकि परमात्मा सब में है। देखिए सफा २६ पर कवित्त नं १५, १६, १७।

(आ) दिखावे की भक्ति से मनुष्य परमात्मा के नजदीक के आने की बजाय दूर चला जाता है। देखिये सफा २५ पर कवित्त नं० १. ८. ६. १३ और सफा २३ पर सवैया नं० ६. १०

गुरु गोविन्द सिंह जी कवि के रूपमें

विद्वान कवियों की भारी कद्र करने के इलावा सत्गुरु जी स्वयं भी उच्च कोटि के कवि थे। इन की वाणी पढ़ कर देखिए इन्हों ने कई प्रकारके सुन्दरछन्द प्रयोग किए हैं। नमूने के तौर पर —

छप्पै छन्द, भुजंग प्रयात, चांचरी, कुआल. चरपट, मधुभार, भगवती, रसावल, हरंबोलमना, एकाक्षरी, कवित्त, सवैय्या, चौपाई, तोमर, पाधड़ी, तोटक, नराज, त्रिभंगी।

गुरु तेग बहादुर साहिब

का

संक्षिप्त जीवन

गुरु तेग बहादुर का जन्म, १ ऐप्रिल सन १६२१ (५ वैसाख सम्वत १६७८) को हुआ। पिता का नाम गुरु हरि गोविन्द साहिब था।

गुरु हरि कृष्ण साहिब के बाद एप्रिल सन १६६४ में, ४३ साल की आयू में गुरु बने। उस समय यह जिला अमृतसर के गांव बकाला में रहते थे। अब वहां एक सुन्दर गुरुद्वारा है।

बाबा बकाला गांव से उसी साल सन १६६४ में सतगुरु जी श्री हरि मन्दिर साहिब के दर्शनार्थ अमृतसर में आए श्री अकाल तख्त साहिब के समीप ही "गुरुद्वारा थड़ा साहिब" है—वहां आ विराजमान हुए। वहां से लौट कर बाबा बकाला के रास्ते से आप कीर्त पुर चले गए। यह नगर जिला होश्यार पुर में है। गुरु हरि गोविन्द साहिब जी की आज्ञानुसार बड़े साहिब जादे बाबा गुरुदित्ता जी ने इसे बसाया था। यह वही जगह है, जहां गुरु नानक देव जी एक मुसलमान फकीर साईं बुड्ढण शाह से मिले थे।

गुरु हरि गोविन्द साहिब ने इस इलाके में सिख धर्म के प्रचारार्थ कीर्त पुर को केन्द्रस्थल नियत किया हुआ था। यहीं आप मार्च १६४४ में ज्योति में ज्योति मिला गये। उन